Pandit Dharmanand

ॐ

योगचन्द्रोदय

अर्थात्

हठयोग और राजयोग से शारीरिक और आत्मप्रकाश की कुञ्जी.

लेखक

पं० केशवानन्द शर्मा गोपेश्वर

चमोली, गढ़वाल.

मुद्रक

केसरीदास सेठ सुपरिंटेंडेंट

नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ.

सन् १९३० ई०

प्रथमवार १०००

मू० ॥) रु०

Dr. Khanduri I.C.S.
Deputy Commissioner
Pratapgarh

D N Khanduri

D.N. Khanduri Square.
P.O. Khandah
(via Pauri)
Garhwal (U.P)
India

Presented to Mr Dhanan and Khanduri Esq. village Bachheli Patli Kahelsyun P.O. Khandah Garhwal (U.P.) India by his ever admiring friend E. H. Wilson Patron of Hindi.

भूमिका

अपने मित्रों की चिर आग्रह से मैंने यह पुस्तक लिखना आरम्भ किया। क्योंकि जहां उन लोगों को शीर्षासन पर इतना प्रबल भरोसा होना कि विना ओषधि विना किसी प्रकार पैसा खर्च किये या विना कोई वस्तु जुटाये ही और साधारण सी क्रिया करनी पड़े, अर्थात् जिसको महामूर्ख भी सहूलियत से कर सके, वहां उनकी यह प्रेरणा कि पुस्तका-कार पुस्तक प्रकाशन करके ही जनसाधारण का भला हो सकता है वहां मेरी असमर्थ लेखनी ही इस काम को करने के लिये विवश करती रही। लेकिन जब देखा कि सचमुच यह मुद्रा गुणों की खान है, तब चाहे शुद्ध हो या अशुद्धियों से ही भरा पड़ा हो, गुणीजनों को गुण-ग्रहण से मतलब है, लिख ही तो दिया।

जिन सज्जनों के इस विपरीत मुद्रा से पुस्तक में लिखे हुए रोग बड़ी आसानी से गये, उनसे मैंने प्रशंसापत्र इसलिये नहीं लिया कि एक तो मैं ही पर्वतीय होने पर भी ग्रामीण जन हूं, जो कि भविष्यत् का कुछ भी विचार नहीं रखता था। द्वितीय प्रशंसापत्र लेना और उसको प्रख्यात करना ऋषियों की लेखनी पर बट्टा लगाना है। सर्वसाधारण को चाहिये कि इस मुद्रा को वह करके ही देखें कि यह एक ही आसन कितना आयु को बढ़ानेवाला, कुल की कुल बीमारियां भगाने-वाला, तथा सारे के सारे व्यायाम को अपने ही ऊपर लेनेवाला, और प्राणायाम तक को नीचा दिखानेवाला, दिनमें उमंग और स्फूर्ति देनेवाला, और रात्रि को नींद लानेवाला, भोजन को

भरपेट खिलानेवाला, क़ब्ज़ को साफ़ मिटानेवाला, पेट और आंत की दूषित वायु को निकालनेवाला, छाती और फेफड़े में अमृत वर्षानेवाला, मस्तिष्क को पूर्णतः बल देनेवाला, यौवनावस्था को सदा स्थिर रखनेवाला, पतले वीर्य को गाढ़ा करनेवाला, वीर्य को मस्तिष्क में प्रवेश करानेवाला, आयु को पांच सौ वर्ष तक ले जानेवाला, पेट से शिर तक चाहे कोई रोग हो समूल नष्ट करनेवाला, शिर के बालों को आजन्म काला रखनेवाला, तथा श्वेत केशों को जड़ से काला करनेवाला, और स्त्रीसहवास में स्तम्भन देनेवाला है अर्थात् धर्म अर्थ काम और मोक्ष को देनेवाला है।

जिन गुणीजनों के कर-कमलों में यह तुच्छ भेंट पहुंचे, वे इस महान् शक्तिप्रदाता आसन का दिन प्रतिदिन अभ्यास बढ़ावें, और अति बढ़ावें। जिनको जो कुछ लाभ इस महान् आसन से हो, वह अवश्य चार छः महीने में एक पोस्टकार्ड सूचनार्थ भेज दें।

इस पुस्तक में लिखी हुई प्राणायामविधि आर्य्यसमाज के स्तम्भ पूज्यपाद श्री० १०८ महात्मा स्वामी नारायण, लिखित लिखे गये हैं, जो कि साथ ही अन्य प्राणायाम की पुस्तकों में लिखे हों। कुछ अंश श्रद्धेय इन्दौर के भरतियाजी की पुस्तक "सूर्यचक्रबंध" से लिया गया है। आशा है कि पाठक इससे भी अधिक लाभ उठायेंगे।

जनसाधारण का सेवक—
केशवानन्द शर्मा गोपेश्वर

लखनऊ
१६ फाल्गुन ८६ वि०

पो०—चमोली
ज़िला—गढ़वाल

village Buchheli
Patti Katulsyun

योग चन्द्रोदय

ॐ परमात्मने नमः

अथ ध्यानम्

ॐ सत् चित् आनन्द

ओंकार रूप परमेश्वर को प्रणाम,
सद्भक्ति युक्त करते पर मुक्ति पाने।
है अष्टधा प्रकृति भूप जगत समग्रे,
भावानुरूप करता सबको विचार॥
है चित्त एक वचनात्मक सृष्टिकारी,
संकल्प मात्र स्वत्ता यह दृष्ट सारी।
होता विचार जग में सबका निदान,
है देह मुग्ध कुछ भी न विचार मात्र॥
ओंकार रूप घटना जग की बनी है,
है पूर्णनाम उस ईश्वर का यथार्थ।

हैं तीन अक्षर जहां वह अर्ध मात्रा,
है चित्कला वह विचार विरोध गम्या॥
ओंकार रटन है करता सुगम्य,
सद्भाव चित्कलन के उदयानुसार।
संविक्ति वेदन मनोरथ देखता है,
हों पूर्ण तन्मय वहां सद्सद् विचार॥
ॐ ॐ सदा परम ॐ प्रभु ॐ विशाल,
ॐ सामगान शुभ ॐ श्रुति गीत ॐ है।
ॐ है चराचर विचार अमोघ शक्ति,
ॐकार मात्र सब है प्रभु ॐ पवित्र॥

योग साधन वह क्रिया है कि, योगी अपने योगबल पर तीन लोक के राज्य को लात मार देता है। योगी क्या कुछ नहीं करके दिखा सकता है। इसी आशय को लेकर एक छोटी सी हठयोग की क्रिया को पुस्तकरूप में जनता के सामने उपस्थित करता हूँ। यद्यपि यह हठयोग विद्या सब ही के पुस्तकालयों में विद्यमान है, लेकिन केवल पुस्तकालय की शोभा बढ़ाने के अतिरिक्त कोई भी मनुष्य यह क्रिया करने को धेय नहीं समझता। यह योग इतना कठिन नहीं है कि कोई उसे कर न सके। मैं तो आग्रहपूर्वक कहूँगा कि ६० वर्ष की आयुवाला बूढ़ा भी इस हठयोग की क्रिया

को सुगमता से कर सकता है। वृद्ध देवता देखें कि एक ही महीने के अन्दर आपके शरीर में कितनी शक्ति आ गई है। (कठिनता कुछ भी नहीं है)—प्रारम्भ में योगी अवश्य ही कुछ कठिनता समझ ले, किन्तु १–२–३ दिन के अन्दर ही योगी की विस्मयकारक कठिनता सुलभ होने लगती है। सच पूछा जाय तो मनुष्य की कायरता ही अकर्मण्यता का प्रधान कारण है। वरना इतना भयभीत होने का कोई कारण नहीं। योग की क्रिया इतनी सरल है कि शायद ही दूसरी क्रिया ऐसी सरल तथा परम उपयोगी हो।

केवल यह हठयोग की क्रिया ऐसी है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देनेवाली है। क्योंकि कोई तत्त्वयोग का ऐसा नहीं जो इसमें समता न रखता हो। जब तक यह हठयोग न किया जाय, तब तक राजयोग की सिद्धि नहीं हो सकती। इसलिये प्रत्येक दीर्घ जीवन के जिज्ञासुओं से प्रार्थना है कि इस हठयोग के अभ्यास को नित्य किया करें।

इस पुस्तक में राजयोग, हठयोग, जपयोग, सूर्य चक्र वेध आदि जितनी भी योग की क्रियायें लिखी गई हैं, सबकी सब अनुभव सिद्ध हैं। क्योंकि वर्तमान काल के सज्जन प्रत्यक्ष प्रमाण देखना चाहते हैं। अतः यह योग विद्या प्रत्यक्ष फलप्रद है।

यह हठयोग की विपरीति करणी मुद्रा प्रत्येक स्त्री पुरुष को अपनी दिनचर्या में ढाल देनी चाहिये, प्रत्येक जीवधारी प्राणी मौत से बहुत डरता है, तिस पर मनुष्य प्राणी अपने जीवन रक्षा के निमित्त कुछ न कुछ विचार अवश्य ही करता रहता है। धनी जन तो मृत्यु के समीप जाना और अपने वैभव को छोड़ना, इतना भयंकर समझते

हैं कि सदा ही उनकी उच्च अट्टालिका में वैद्य या डाक्टर उपस्थित रहते हैं। और अमूल्य रत्नों की भस्म उनके जर-जर शरीर को भस्म करती ही रहती है। उदर में जिन पदार्थों की पाचन क्रिया सुचारु रूपेण नहीं हो सकती, उन्हीं पदार्थों का नित्यमेव सेवन करना, और रात दिन तकिया के सहारे लेटे रहना, मनुष्य जन्म को नरकगामी बनाना नहीं, तो क्या है? मनुष्य जितना भी भोजन करे, अगर उतना कार्य इस शरीर से न लिया जाय तो आपकी पाकस्थली आपसे डर कर खाद्य पदार्थों को जो कि आपके उदर में चिल्ला २ कर पुकार रही है कि क्यों मुझे जीते ही समाधि (क़ब्र) कर रहे हो? शरीर की नसनाड़ियों को किसी प्रकार भी संचालन न करना, और अधिक से अधिक गरिष्ट पदार्थों का खाना, केवल अपने शरीर को नरकगामी और बदसूरत बनाना है। हमारे भारतवासी व्यवसाई जन तो इतने धनलोलुप हो चुके हैं कि, उनको आठों प्रहर सिवाय धन चिन्ता के और कोई दूसरा कार्य ही नहीं। धन चिन्ता उन्हीं को शोभा देती है जो अपने मानुषी जन्म का भी मूल्य रखते हों, और उस धन का भी अच्छे प्रकार उप-भोग कर सकें। इसलिये मानुषी जन्म के मूल्य रखनेवाले प्रत्येक महानुभावों से निवेदन है कि, वह इस महान् आयु प्रदान करनेवाले विपरीति करणी मुद्रा को, अपने नित्य का ध्येय समझ कर प्रदिदिन अवश्य किया करें।

साधु महात्माओं की बात

आजकल प्रायः नगरनिवासी तथा ग्रामीण वृद्ध जन कहा करते हैं कि अमुक महात्मा इतने सौ वर्ष तक जिया तथा

अमुक महात्मा ने अपने श्वेत केशों को काले कर दिये। इसी प्रकार की बातें पुराणों में भी पाई जाती हैं कि अमुक ऋषि इतने सहस्र वर्ष पर्यन्त जिया इत्यादि बातें मेरी समझ से एक भी झूठी नहीं थी, सबकी सब सच्ची और सही थीं। मैंने स्वतः ६ मास के नित्य अभ्यास से देख लिया है कि, मेरे श्वेत केश चतुर्थ मास में ही काले हल्के रंग के रँगे हुये दिखाई दिये, और कोई बाल साफ काला हो गया था। पांचवें महीने में सारे चेहरे के बाल आधे काले हो गये। मेरे परिचित जन जानते थे कि मेरे शिर तथा मूंछ दाढ़ी में सफेद बालों के अतिरिक्त एक भी बाल काला न था और गृहस्थ दुःख तथा आर्थिक संकट ने अभी से ६५ वर्ष का वृद्ध बना दिया था और मुझे अपनी इस अवस्था पर सदा ही दुःख हुआ करता था। किन्तु देखनेवाले परिचित जनों ने स्पष्ट कह दिया कि तुम्हारी आकृति में नवीनता आ रही है, और स्वयं मैं भी अपने शरीर को अच्छी दशा में स्फुरित समझ रहा हूँ। इसलिये प्रत्येक दीर्घ जीवन के जिज्ञासुओं से प्रार्थना है कि, वह अपना नित्य कर्म (ईशवन्दना, सन्ध्योपासना) से निवृत्त होकर एकान्त कमरे में जाकर दस से बीस मिनिट तक जितना भी हो सके करें, तब देखेंगे कि आपके शरीर की अवस्था अब कैसी हो रही है।

हां। अब हमें उन योगियों से निवेदन करना है कि जिन्होंने विश्वास के साथ इस विपरीति करणी आसन पर अपना जीवन सार्थक बनाने का दृढ़ संकल्प कर लिया हो, और अपने मनुष्य शरीर का मूल्य समझते हों। क्योंकि अधेड़ आयुवाले तो इसे करेंगे ही, किन्तु तरुण योगियों से विशेष

कर निवेदन कि आप अपने योगासन के कमरे में यावज्जीवन के लिये एक डायरी और पेन्सल रख छोड़े, ताकि वह अपनी योगासनी उपलब्धों को डायरी में प्रत्येक पखवाड़े को इस प्रकार लिखें कि, अमुक दिनों में मेरी पाचन क्रिया इतनी बढ़ गई, इतने दिनों में मेरा अभ्यास पूर्णता को प्राप्त होगया, इतने मास में यह स्फुरिता आई, इतने वर्ष में यह कार्य करने में कुशल रहा तथा अब उन जनों से मुकाबला किया जो मेरे समवयस्क हैं। इत्यादि बातें हैं जो कि आपको स्मरणार्थ डायरी में लिख देनी चाहिये। इसी प्रकार आप अपने योगाभ्यास का जीवनचरित्र लिख कर भविष्य सन्तानों के लिये मार्ग साफ करते चलें।

मुझे अपने योगाभ्यास के पांचवें या छुठे महीने में जो कुछ उपलब्ध हुआ है वह पाठकों के समक्ष रख दिया है। लेकिन पांचवें महीने के अन्त और छठे महीने के आरम्भ में जो अनुभवारंभ हुआ है, वह है पांव का सो जाना। अर्थात् पांचवें महीने के अन्त और छुठे महीने के आरम्भ में पांव की तलेटी पर पांव सो जाने की जैसी झन्झनाहट मालूम देती थी। एकदो दिन तो पांव की तलेटी पर इतनी प्रबलता हुई कि मुझे घी की मालिश करने पर विवश होना पड़ा। लेकिन दो चार दिन घी की मालिश करने पर लाभ न दिखाई दिया और झन्झनाहट कुछ थोड़ा समय के लिये पांव में उँगुलियों के ऊपर आने लगी। इसी प्रकार वह झन्झनाहट अब घुटनों तक आ गई, लेकिन कष्ट की अधिकता न रही। पाठक यह न समझें कि यह कष्ट कुछ असह्य तथा कुछ समय तक रहनेवाला है, केवल पांच दस मिनिट तक रहती है। मेरी समझ में यह कोई तत्त्व है, जो

कि योग क्रिया करने पर वक्र मार्ग का अवलम्बन करता है। इसके आगे जो कुछ अनुभव प्राप्त होगा, पाठकों के समक्ष उपस्थित किया जायगा।

देखिये योगी इस क्रिया के अभ्यास को किस प्रकार वर्णन करते हैं।

यत्किंचित् स्रूयते चन्द्रादमृता दिव्यरूपिणः।
तत्सर्वं ग्रसते सूर्यस्तेन पिण्डो जरायुतः ॥*

तालू के नीचे योगियों ने चन्द्रमा का स्थान बतलाया है, और नाभी पर सूर्य का। जीभ के मूल स्थान से सदा ही अमृतधारा वर्षता रहता है। जो ऐसा स्थान है तालू के मूल में, उस अमृत को, नाभी में स्थित है जो सूर्य (जठराग्नि) निरन्तर आस्वादन करता है उस अमृतधारा को।

तालू के नीचे योगियों ने चन्द्रमा का स्थान बतलाया है, और नाभि पर सूर्य का। जीभ के मूल स्थान से सदा ही अमृत वर्षता रहता है। यहां आपको प्रश्न होगा कि वह अमृत क्या पदार्थ है ? वह अमृत है राल। अगर आप किसी किस्म का भोजन करते हैं तो, स्वभावतः भोजन में राल का मिश्रण होके, भोजन को पाकस्थली में इस प्रकार सुलभ कर देता है कि, यथा समय पाकस्थली को निर्वि-घ्नतापूर्वक पाचन कर देता है। अगर आपने राल को भोजन

---

* दिव्य अमृतमय है चन्द्रमा ऐसे स्थान पर और उससे सदा ही अमृत की धारा बहती है, ऐसा स्थान है जो तालू के मूल में उस अमृत को, नाभी में स्थित है जो सूर्य, (जठराग्नि) निरन्तर आस्वादन करता है, उस अमृत को।

के साथ अच्छे प्रकार न मिलाया तो आप अमृत के बजाय विष पान करते हैं। भोजन को अच्छे प्रकार जुगाल २ कर निगलना चाहिये। अगर आप भोजन को अच्छे प्रकार चबा २ कर राल को मिश्रण न करेंगे, तो निश्चय जानो कि आप योगसाधन नहीं कर सकते, बल्कि जठराग्नि नि ल करके ही छोड़ेंगे। इसके कारण को सब ही विद्वत्-जन जानते हैं। क्योंकि भोजन को जितना भी अच्छे प्रकार चबाया जायगा उतना ही तालू के मूल में से राल निकल २ कर अन्न के कण २ में घुल कर भोजन को अमृतमय बना देगा, और आप आयुष्मान् हो जायँगे। अर्थात् अमृतरूपी राल अन्न के कण २ में मिलकर जो उदर (नाभिस्थान) में जाकर यही सूर्यरूप जठराग्नि में पाचन क्रिया करती है। तालू के मूल में जो अमृत (राल) निकलता है अवश्य ही सूर्य (जठराग्नि) उस अमृत को भस्मीभूत कर देता है। यह बात निराली है कि प्राकृतिक नियम फिर उस अमृत को यथातथ्य भरपूर कर देता है। लेकिन योगी का धर्म है उस अमृतरूपी राल की यथासाध्य रक्षा करे, ताकि योगी अपने जीवन को द्विगुण त्रिगुण कर सके। ये विपरीति करणी मुद्रा उस अमृत की रक्षा करता है। इस-लिये प्रत्येक जीवन रक्षा के जिज्ञासुओं को इस विपरीति करणी मुद्रा को आवश्यक कार्य समझ कर, प्रति दिन इस का नियम बाँध देवें।

तत्रास्ति करणं दिव्यं सूर्यस्य मुखवंचनम्।
गुरूपदेशयो ज्ञेयं न तु शास्त्रार्थकोटिभिः॥

—हठयोग

उस अमृत की धारा को, सूर्य से रक्षा कराने अर्थात् अमृत धारा को सूर्य की अग्नि से रक्षा कराने के निमित्त, जो आगे विधान कहने योग्य मुद्रा रूप करणी है और वह करणी विना गुरु के उपदेश किये सहस्र शास्त्र पढ़ने से भी उपलब्ध नहीं होती है।

विना गुरु के सहस्र शास्त्र पढ़ने से भी ये विपरीति करणी मुद्रा नहीं कर सकते, लेकिन मैंने अपना निजी अभ्यास से आज इसे लिखने के लिये बाधित हुआ हूँ। कोई कठिन कार्य नहीं। हाँ, अगर योगियों को इससे भी कुछ अधिक ज्ञान हो तो वह अलग बात है लेकिन मैंने कतिपय योगियों को ऐसा ही करते देखा है, जैसे कि मैं लिख रहा हूँ, अथवा किया है।

ऊर्ध्वनाभे रधस्तालो रूर्ध्वं भानुःरधश्शशि।
करणी विपरीताख्या गुरुवाक्येन लभ्यते॥

—हठयोग

अब विपरीति करणी मुद्रा के स्वरूप को कहते हैं। ऊपर के भाग में नाभि है, जिसके, और अधो भाग में तालू है जिसके अर्थात् ऊपर के भाग में अग्निरूप सूर्य हो जाय और अर्ध भाग में अमृत रूप चन्द्रमा हो जाय और जब ऊपर के भाग में नाभि और नीचे के भाग में तालू ऐसा जो योगी हो जावे, तब ऊपर सूर्य और नीचे चन्द्रमा हो जाते हैं। वह विपरीति करणी नाम की मुद्रा अर्थात् ऊपर सूर्य और नीचे चन्द्रमा होजाय। इसलिये विपरीति करणी मुद्रा तब ही घट सकती है जब पूर्वोक्त मुद्रा किया जाय और वह

विपरीति करणी मुद्रा गुरु वाक्य से ही मिल सकती है अन्यथा नहीं।

अर्थात् ऊपर पैर, जमीन में शिर, ज़मीन में दोनों हाथों का सहारा देकर शिर को भूमि में कम से कम आधा घंटा तक ठहराकर, पांव ऊपर किये रहने को विपरीति करणी मुद्रा कहते हैं।

नित्य अभ्यासयुक्तस्य जठराग्निविवर्धनी।
आहारो बहुलस्तस्य सम्पाद्साधकस्य च॥

नित्य अभ्यास करता है जो योगी उसकी जठराग्नि इतनी प्रबल हो जाती है कि जितना भी आहार करेगा, उतना ही पाकस्थल पाचन कर देगा। इसलिये योगी को चाहिये कि जहां तक बन सके, भोजन से कुछ अधिक ही भोजन करे। अन्यथा—

अल्पहारो यदि भवेद्ग्निर्दहति तत्क्षणात्।
अधःशिराश्चोर्ध्वपादः क्षणास्स्यात् प्रथमे दिने॥

—हठयोग

अगर विपरीति करिणी अभ्यासी योगी अल्प अहार (भोजन) करता है, तो योगी को जठराग्नि इतनी प्रज्वलित हो जाती है कि क्षण मात्र में योगी के शरीर को भस्म करने में उद्यत हो जाती है, इसलिये योगी को चाहिये कि अभ्यास के समय रुचि से भी अधिक भोजन करे।

अब विपरीति करणी मुद्रा को कहते हैं अर्थात् सूर्य के नीचे चन्द्रमा ऐसी क्रिया जो की जाती है उसको लिखते

हैं। प्रथम दिन एक क्षण से इस अभ्यास को करे शिर दोनों हाथ गल पृष्ठ भाग भूमि पर और दोनों पांव ऊपर को खड़ा करे, अर्थात् प्रथम दिन क्षणमात्र इस प्रकार स्थित रहे।

क्षणाञ्च किञ्चदधिकमभ्यसेच्च दिने दिने।
वलितं पलितं श्चेव षण्मासोर्ध्वं न दृश्यते॥

—हठयोग

याममात्रं तु यो नित्यमभ्यसेत्सतु कालजित्॥

—हठयोग प्रदीपिका

प्रतिदिन क्षण २ से कुछ २ अभ्यास बढ़ाता जाय अर्थात् २—३—४ क्षण इस प्रकार एक २ दिन करके अभ्यास को बढ़ाता जाय। अब इस विपरीति करणी मुद्रा के गुणों को कहते हैं।

पूर्वोक्त प्रकार से अभ्यास जो योगी करता है उसके श्वेत केश और बुढ़ापे के मुंह की सुकड़न छः मास में जाते रहते हैं। अर्थात् श्वेत केश काले भौंरे के समान कालेहो जाते हैं और मुंह की बुढ़ापे में जो सुकड़न आ जाती है जाती रहती है अर्थात् पूर्ण यौवनावस्था आ जाती है और जो योगी प्रहर मात्र इस अभ्यास को करता है वह मृत्यु को जीत लेता है। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि यह हठयोग प्रारब्ध कर्म का भी प्रतिबंधक है। अर्थात् एक प्रहर मात्र अभ्यास से ५०० सौ वर्ष की आयु हो जाती है। लेकिन युवावस्था से अभ्यास करने पर इतना दीर्घजीवी होता है।

मेरी अनुभूत विधियां

मेरा निज का अभ्यास इस प्रकार था कि मैंने यह तीन श्लोक के टुकड़े फटे हुये कहीं मिले थे, उसको अवधि आज १५ या १६ वर्ष होते हैं। निरन्तर याद आया करते थे कि यह हठयोग अवश्य करना चाहिये। ऐसा महान् पुरुषों का कथन है कि मनुष्य का मन इतना शक्ति-शाली है कि वह जिस कार्य को निश्चित ठान लेता है उसे वह करके ही छोड़ता है। अब मुझे कारणवशात् घर छोड़ना पड़ा, और गंगा किनारे उत्तर काशी के तरफ एक कुटिया पर, मेस्मरेज़िम के अभ्यास को करता था. क्योंकि मेस्मरेज़िम के अभ्यासी योगी को अधेड़ उमर में मेस्म-रेज़िम के अभ्यास की मनाई है। कारण मेस्मरेज़िम के अभ्यासी को पूर्ण बलिष्ट होने की आवश्यकता है। यद्यपि मेरी अवस्था ५२ वर्ष की है, तथापि मेस्मरेज़िम ने मुझे घर छोड़ने पर विवश किया और मैं कुछ दिन के लिये उत्तर-काशी के तरफ चला गया। योगियों को आशा दिलाता है कि मैंने इस अवस्था पर भी मेस्मरेज़िम (त्राटकयोग) का भी अच्छे प्रकार अभ्यास कर लिया है। इस प्रकार योग के अन्तर्गत मैंने इस हठयोग को भी आरम्भ किया। अर्थात् एकाएक मेरे हृदय ने आज्ञा दी है कि यदि तुझे मेस्म-रेज़िम को पूर्ण भ्यासी बनना है तो इस हठ (विपरीति करणी) का योगी भी बन। वरना तेरा (मेरा) मेस्म-रेज़िम बुढ़ापे की असफलता से क्षणभंगुर ही समझ। मैंने अपनी आत्मा की आज्ञा का हनन न कर यह निश्चित किया कि विपरीति करणी मुद्रा का अभ्यासी बन गया।

प्रथम दिन मैंने अपने भृत्य (नौकर) को जो कि एक लड़का था उससे अपनी टाँगों को ऊपर करने का सहारा लिया और बराबर ३ दिन तक उससे सहारा लेता गया। किन्तु मैं अन्य योगियों को सूचित करता हूँ कि किसी दूसरे मनुष्य से सहारा लेने की आवश्यकता नहीं है। हाँ स्थूल शरीर अथवा जिस मनुष्य को मेदा रोग हो गया हो वह अवश्य ५–७ दिन तक किसी दूसरे मनुष्य से सहारा ले सकता है वरना कोई कारण नहीं कि २०-२५ के नवयुवकों से लेकर ६० वर्ष के बूढ़े तक को इसमें सहारा लेने की आवश्यकता पड़े।

योगारंभ विधि

योगी को चाहिये कि प्रथम दिन एकान्त कमरे में जाकर एक लम्बा कपड़ा अथवा धोती को ले। अब उस कपड़े को अपने एक हाथ में फेंटा बाँध देवे अर्थात् जैसे कि विशेष कर स्त्रियाँ पानी का घड़ा सिर में रखने के लिये कपड़े की गुंडी बना लेती हैं। कपड़ा इस प्रकार का और इतना हो कि सिर टेकने के लिये सुखदायक हो, गोलाकार और समानता में फर्क न पड़े। यदि समानता में ऊँचा नीचा हुआ तो योगी को विपरीति करणी करने में कुछ २ गड़ने सा लगता है। साधारण शरीर के योगी को चाहिये कि दिवाल से ३-४ अंगुल की दूरी पर जमीन में उस कपड़े फेंटे को रख छोड़े। अब फेंटे के ऊपर शिर को टेक कर चारों हाथ पाँव जमीन में टेक देवे अब जरा सा पैरों को बल देकर ऊपर उछलने का प्रयत्न कीजिये। ताकि भीत के सहारे आप अपने शरीर को उल्टा अर्थात् विपरीति

करणी मुद्रा कर सक। हाथों को उल्टे शिर की तरफ जमीन में टेक देवे और पैरों को दिवाल के सहारे खड़ा कर लो यही विपरीति करणी मुद्रा है और प्रथम दिन इतना ही क्षण भर ठहर कर खड़े हो जावें।

प्रथम दिन आपने कुछ ही पलाओं को लेकर विपरीति करणी किया था। अब दूसरे दिन से एक २ मिनिट की अवधि देते जाइये। इस प्रकार आप अभ्यास को बढ़ाते २ एक २ दिन में ५-५ या दस २ गायत्री मंत्र को जप करते हुये इस प्रकार आप दो ढ़ाई पाँच सौ तक जाप कर सकते हैं। जिन योगियों को गायत्री मन्त्र नहीं आता वह अपने किसी भी मन्त्र को जप सकते हैं अथवा १-२-३-४-५ आदि गिनतियों से अपना योगाभ्यास कर सकते हैं। अर्थात् पहले दिन पाँच तक, और दूसरे दिन दस तक गिन गये। इसी प्रकार क्रमशः अभ्यास को बढ़ाते गये। घड़ी को रखकर भी अभ्यास हो सकता है। विशेष इस योगसाधन में मन की घड़ी ही श्रेष्ठ घड़ी है। सातवें दिन आप स्वयं अनुभव कर सकते हैं कि आपकी क्षुधा कितनी प्रबल हो गई। मुझे अत्यन्त आश्चर्य युक्त होना पड़ा कि मैं क्यों इतना भोजन करता हूं, क्योंकि उस समय उपरोक्त पूर्ण श्लोक प्राप्त नहीं हुये थे। केवल इतना स्मरण था कि यह विपरीति करणी मुद्रा सिर्फ आयु बढ़ाने के लिये है। यह श्लोक याद न था कि "अल्पहारो यदि भवेदग्निर्दहति तत्क्षणात्" योगी अगर अल्पभोजी होगा तो योगी की जठराग्नि इतनी प्रबल हो जायगी कि योगी के शरीर को तत्क्षण ही भस्म कर देगी।

इसी प्रकार यदि योगी को अभ्यास बढ़ाते २ एक महीना हो गया हो और इस अभ्यास के बढ़ाते समय में योगी की गर्दन पर कुछ २ झटका देने में कष्ट मालूम हो तो योगी को चाहिये कि रात्री को सोते समय कुछ घी की मालिश कर देवे (यह कष्ट भी प्रायः प्रौढावस्था अथवा बुढ़ापे में आने वाला है)। मैंने इस प्रकार योग की क्रिया को बढ़ाया कि प्रथम दिन से ३ दिन तक केवल दिवाल के सहारे उल्टा खड़ा होना और शीघ्राति शीघ्र स्वच्छन्द खड़ा होना। पश्चात् तीन दिन के प्रतिदिन ५ गायत्री मंत्र को पढ़ना। अर्थात् दूसरे दि न दश और तीसरे दिन पन्द्रह। इसी प्रकार किसी दिन दश गायत्री मंत्र को भी स्मरण कर लेता था। मेरे अभ्यास बढ़ाते स मय में कभी २ नागा भी हो जाया करता था। कारण कि मुझे इन उपर्युक्त श्लोक को पन्द्रह, सोलह वर्ष व्यतीत हो चुके (देखा था) कि जिन पर एका-एक विश्वास भी नहीं था। कहीं ऐसा करने से भी बाल काले हो सकते हैं ? अतः दश २ पन्द्रह २ दिन का भी नागा हो जाया करता था।

अब जब कि चार मास पूर्णतः व्यतीत हो चुके तो एक दिन आरसी (दर्पण) से अपनी आकृति देखने का समय मिला। यद्यपि दर्पण कुछ २ सदा ही देख लिया करता था किन्तु उस दिन ऋषिकेश में अपने यात्राकाल का स्मरण हो आया जो कि ४-५ दिन माघ के बीतने पर हिमाच्छादित पर्वतमा-लाओं को लांघकर देहरादून आना पड़ा था, और मार्ग की कठिनाइयों को स्मरण कर महा दुःख होता था। इस-लिये मुखाकृति में दुर्बलता का आना स्वाभाविक ही है कि इतने में अपने मुख के श्वेत केशों पर गहरी दृष्टि डालने से

जान पड़ा कि मेरे बाल कुछ २ कालेपन की रंगाई लिये हुये हैं। मेरे सारे शिर के केश श्वेत हो चुके थे एक भी बाल काला नहीं था, तो देखने से ज्ञान हुआ कि केशों पर कालेपन की रंगाई छाई हुई है और कहीं कहीं कोई केश पूर्णतः काला है। अब मैंने अभ्यास को पूर्णतः बढ़ा लिया और देखते २ दो महीने के अन्दर सारे केश कुछ के कुछ हो गये। अगर मैं अपने अभ्यास को प्रथम ही से विश्वास के साथ करता जाता तो निश्चय था कि चार या पांच महीने में सबके सब बाल काले हो जाते।

अगर योगी लगातार अभ्यास को करते जाते हैं तो निश्चय है कि वे अपने मनोरथ सिद्धि के निकट हैं। आज तक योगी केवल टांगों के सहारे सिर को जमीन में रखकर और अपने हाथों का सहारा लेकर शिर के पीछे के तरफ भींच लेता था, लेकिन अब योगी को चाहिये कि टांगों के सहारे हाथों को भी सीधा खड़ा करे। प्रथम दिन केवल एक ही हाथ को टांगों की तरफ खड़ा करे, फिर शनैः २ दूसरे हाथ को भी खड़ा करे। अर्थात् दोनों हाथों को टांगों के सहारे खड़ा करे, तब तक किये रहो जब तक कि तुम्हें शक्ति है। परतंत्रता होने की आवश्यकता नहीं।

इस अभ्यास के करने से शरीर का सारा बोझ अन्तड़ियों, छाती तथा गर्दन के पीछे के हिस्से के दोनों नसों पर अधिकाधिक पड़ता है इसलिये बहुत शीघ्र थक जावेंगे, तब तुम्हें हाथों को उतार कर फिर शिर के पीछे भींच लेने चाहिये, और अब उसी प्रकार रहना चाहिये जिस प्रकार कि तुम थे, लेकिन असह्य होने पर फिर खड़े हो जावो।

जब योगी हाथों को भी टांगों के सहारे विपरीत करणी करने लगता है तो, गले पर बोझ का पड़ना स्वाभाविक है और अब तिल मात्र भी सिधाई में फर्क होगा तो कंठ की उसी नस पर जोर पड़ने लगेगा, जिधर कि भार अधिक होगा। अतः दोनों हाथों को टांगों से नीचे उतार कर हाथों पर बल देकर शिर को ठीक कर लो। हाथों को टांगों के सहारे खड़ा करना कोई शास्त्रसिद्ध बात नहीं है, यह मेरी अपनी शक्ति बढ़ाने के अभिप्राय निजू मत है इसलिये यह नोट योगियों के आधीन है।

पिछले दो तीन महीने से आपने अपने अभ्यास को पूर्णतः कर लिया है, और तब आपने टांगों के सहारे हाथों को भी उठाने का यत्न किया है। लेकिन अब और एक कठिनता आपके सामने रखता हूं, वह है प्राणायाम! विपरीति करणी योगी के लिये अगर वह प्राणायाम का प्रथमाभ्यासी नहीं है तो, बहुत ही कठिनता रहेगी। कारण यह है कि प्राणायाम महान् योग का अभ्यास सर्वसाधारण को नहीं आता। अगर किन्हीं महानुभावों को प्राणायाम का अच्छे प्रकार अभ्यास है तो योगी के लिये कुछ भी कठिन नहीं है। हाँ, प्रथमावस्था में योगी चाहे कितना ही प्राणायामी क्यों न हो, लेकिन कठिनता अवश्य होती है। इसलिये योगी को चाहिये कि जब तीन चार महीने का अभ्यास परिपक्व हो जावे तो शनैः २ प्राणायाम का अभ्यास भी इसी विपरीति करणी मुद्रा में करता जावे। प्राणायाम विपरीति करणी मुद्रा की प्रथमावस्था में एक ही गायत्री मंत्र पर्याप्त है। कारण सारे शरीर का भार एकमात्र हृदयस्थल पर पड़ता है इसलिये प्राणायाम कुम्भक अत्यन्त कठिन है। योगी

को चाहिये कि शनैः २ प्राणायाम को बढ़ावे, अगर योगी ने इस प्रकार अभ्यास को बढ़ा लिया तो सचमुच योगी सफलता के शिखर पर पहुंच गया।

जितने भी व्यायाम हैं और यदि आप व्यायाम करते हैं तो आपको मैं व्यायाम करने से नहीं रोकता। किन्तु सच पूछा जाय तो अब आपको व्यायाम करने की आवश्यकता कदापि न पड़ेगी, कारण कि यदि आप दो घन्टे या उससे कम समय इस पुस्तक के लिखे योगसाधन में लगाते हैं तो योगी स्वतः अनुभव करेगा कि शारीरिक शक्ति के अलावे आत्मिक शक्ति कितनी उच्चता को प्राप्त हो गई है। यों कहिये कि कोई भी अंग योगी का ऐसा नहीं है जिस पर योगी ने विविध प्राणायाम या विपरीति करणी मुद्रा से ठीक न कर लिया हो। यदि आप एक घन्टे से दो घन्टे तक प्राणायाम आदि क्रिया को करते हैं तो, योगी को थकावट का आ जाना स्वाभाविक ही है। अतः योगी को चाहिये कि थोड़े समय के लिये अपनी चारपाई पर आगे लिखे हुए सुखदा प्राणायाम को कर लेवे।

शीर्षासन का द्वितीय प्रकार

पीछे लिखे अनुसार विपरीति करणी मुद्रा उन योगियों के लिये अच्छा सुभीताजनक होगा जो कि व्यायामादि किसी प्रकार भी न कर सकते हों, और यह जो द्वितीय प्रकार का लिखा जाता है, यही विपरीति करणी मुद्रा कहलाती है। फलाफल दोनों में किसी प्रकार का भी अन्तर न होगा।

हां ! इसमें कठिनता अवश्य रहेगी, लेकिन सचमुच विपरीति करणी मुद्रा इसी को कहते हैं। मैंने पिछले अभ्यास में जो लिखा है कि हाथों को भी टाँगों के सहारे खड़ा करो, अथवा प्राणायाम का भी अभ्यास करो, सो इस द्वितीय प्रकार के शीर्षासन में यह दोनों न हो सकेंगे। कारण इसमें यह है कि किञ्चित् मात्र में हिलना-जुलना हुआ कि, गिर पड़ने की भय रहेगी। इसलिये इस द्वितीय प्रकार में आप केवल शीर्षासन ही कर सकोगे। अभ्यास इस प्रकार करो।

किसी लकड़ी के तख्तों के चौखटे पर अथवा ज़मीन में, एकान्त कोठरी या स्थान पर दोनों हाथों की उंगलियों को आपस में मिला लो और दोनों हाथों की उंगलियां मिली हुई अपने सम्मुख कुहनी सहित भूमि में ठेक दो। हाथों की अंगुलियां ठीक बराबरी पर भूमि पर मिली होनी चाहिये। इन मिली हुई अंगुलियों के ठीक बीचोबीच अपने शिर को टेक दो और दोनों हाथों की हथेलियों से अपने शिर पर बल दो। अब पैरों को ऊपर उछलने का बल दो। अच्छा तो यही है कि प्रथमावस्था में किसी दिवाल के सहारे परही ऐसा किया जाय, ताकि लटकने पर दिवाल पर टांगों को सहारा मिले। यत् किञ्चित् कुछ दिन के अभ्यास से आप स्वतः हाथों के बल टाँगों को खड़े कर सकेंगे। यही शीर्षासन अर्थात् विपरीति करणी मुद्रा है। लेकिन यह द्वितीयश्रेणी की मुद्रा सर्वसाधारण से न हो सकेगी।

एक विशेष सावधानी

जब आप शीर्षासन लगाते हैं तो याद रखिये मुँह खुला

हुआ न रहना चाहिये। मुँह को बंद कर दो, नाक के राह से श्वास लो। प्राणायाम करते हो तो अच्छी बात है, वरना प्राणायाम करने की जरूरत नहीं। आप देखेंगे कि विपरीति करणी मुद्रा में अगर आपने मुंह बंद कर लिया तो नाक से दीर्घ श्वास आने जाने लगेगा। क्योंकि विपरीति करणी मुद्रा का तमाम भार पसलियों पर आ पड़ता है और पसलियां विकसित होने लगती हैं। गरज कि दो महीने के अभ्यास से आप अपने शरीर को समुन्नत की दशा में देखेंगे, लेकिन यह करके ही होता है!

अगर आपको प्रथम प्राणायाम का अभ्यास नहीं है तो, जब आप प्रथमावस्था में शीर्षासन करेंगे तो इस प्रकार से भी अभ्यास बढ़ा सकते हो, कि प्रथम दिन जब शीर्षासन करो तो मुँह को बंद कर लो तब बड़ी आहिस्तगी से नाक के राह से श्वास को भीतर खींचो और बड़ी आहिस्तगी से श्वास को छोड़ दो। बस, पहला दिन इतना ही करके खड़े हो जावो। लेकिन दूसरे दिन एक और आने-जाने के श्वास को बढ़ाओ, अर्थात् पहले दिन एक, दूसरे दिन दो, और तीसरे दिन तीन, इसी प्रकार जिस प्रकार भी आप बढ़ा सकें बढ़ाने की चिन्ता करें, लेकिन हठ से काम न कीजिये।

दीर्घ श्वास को बाहर फेंकना और अन्दर खींचना आपके अभ्यास पर नहीं है बलिक स्वतः होने लगता है। लेकिन मुंह को बन्द ही रखना चाहिये। क्योंकि सारे शरीर का बोझ कंठगत होने से नाक के छिद्रों को वायु का सञ्चार करना कठिन हो जाता है और मुँह खुल जाता है।

संकुचित छातीवाला ही राजयक्ष्मादि रोगों का शिकार होता है। ऐसी दशा में प्रत्येक गृहस्थ को चाहिये कि अपने

बाल बच्चों में छोटी आयु से ही इस करणी का अभ्यास डाल देवे, ताकि आजन्म फुसफुसादि बीमारियां उन्हें न सतावें।

अहाहा भारत में कैसी अद्भुत विद्या विद्यमान है, लेकिन कैसी अधोगति को पहुंचा है कि जिसकी औसतन आयु २०-२२ वर्ष रह गई है। कहां है वह प्राचीन भारत जिसकी आयु १२५ वर्ष की तो कहनी ही क्या है।

पाचन-क्रिया

योगी की पाचन-क्रिया किंचित् २ अभ्यास से ही बढ़ने लगती है लेकिन १०-१५ दिन में इतनी बढ़ जाती है कि, योगी फूला नहीं समाता है। पाचन-क्रिया क्योंकर इतनी बढ़ जाती है, योगी स्वयं ही सिद्ध करेगा। किन्तु थोड़ा बहुत अपनी ओर से बतलाना भी अभ्यासियों के लिये हितकर होगा। जिस समय योगी अपने योगासन में आरूढ़ रहता है, योगी को देखना चाहिये कि अँतड़ियों तथा नाभि उदर पर कितना अधिक बल पड़ता है। योगी के हृदय उदर में जितने भी अवयव हैं,

---

नोट—१५मिनट बराबर अभ्यास करने से चार मास पश्चात् श्वेत केश काले होने लगते हैं, लेकिन जो बाल शीघ्रहो श्वेत हुए होंगे वही बाल जल्द काले होंगे, और जो बहुत काल के पके हुये हैं वह बहुत विलम्ब में काले होते हैं। इसी प्रकार जिसके बाल ८-१० वर्ष पहले पके हुये हैं वह उतना ही विलम्ब से काले होते हैं और जिसके केश श्वेत हो रहे हैं वह ४-५ मास के अन्दर काले हो जायँगे। जिसके केश काले हैं अगर वह शीर्षासन करता है तो आजन्म बाल श्वेत नहीं होंगे। अभ्यास को पूर्ण छः महीने तक करते रहो। अवश्यंभावि फल की प्राप्ति होगी।

प्रत्येक अवयव विकाश को प्राप्त होने लगते हैं। तब आप ही विचार कीजिये कि जठराग्नि का प्रज्वलित होना स्वाभाविक ही है। जिस योगी का आहार-विहार सुचारुरूपेण ठीक ही चलता है और अत्यधिक भोजन को भस्मीभूत करते चला जाता है, तो सन्देह नहीं कि योगी दीर्घजीवी न हो।

हृदय-रोग तथा उदर-रोग

कोई मनुष्य हृदय-रोग तथा अन्य रोगों से भी पीड़ित हो तो रोगी को चाहिये कि नित्य प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर थोड़ा २ पूर्व लिखित इस योग का अभ्यास करे। रोगी देखेगा कि कितनी शीघ्रता से रोगी का रोग नमस्कार करता है। लेकिन जितना सह्य हो उतना ही करे, हठ का प्रयोग बिलकुल न करे। हृदय-रोग के रोगी को निम्न-प्रकार के पथ्य से योग साधन करना चाहिये।

दिन में पुराने चावल का भात, परवल, गूलर, सहज कोंहड़ा, कच्चा केला और बैंगनादि की भाजी, मूँग, चने और मसूर की दाल, खट्टी चीज़ों में कागजी नींबू पथ्य है। रात में रोटी या पूड़ी हलुवा पूर्वोक्त सब्जी और दूध हितकर है नहाने और पीने के लिये गर्म पानी ठंडा करके पीना हितकर है। तेल की अपेक्षा घृत-पक्क तरकारी खाना श्रेयस्कर है।

साग, खटाई, उर्द की दाल, लाल मिर्च, सरसों का मसाला या तेल, कोंहड़ा, रात में जागना, दिन में सोना, कसरत और ओस में बैठना या बदन में ठंडक लगना निषिद्ध है। कफ-जनित हृद्रोग में भात खाना मना है, रोटी खाना सुपथ्य है।

उदर-रोग में उपर्युक्त पदार्थ सेवन करना, विशेषकर उदर-रोग में मानमण्ड विशेष उपकारी है। और रूक्ष क्रिया या रूक्ष पदार्थ खाना लाभदायक है। नये चावल का भात अजीर्ण की शिकायत रहने पर गुरुपाकी चीज, जलीय वस्तु, ठंडा पानी पीना, ज्यादा तेल मलना, दिन में सोना अनिष्टकारी है। नमक और अन्यान्य खाद्य पदार्थ खाना एकदम मना है। नारियल का पानी पीना हृद्रोग में विशेष उपकार रखता है। रोगी जितना भी दूध पी सके पीने को देवे। स्वप्नावस्था में वीर्यपात होने पर खूब दूध पीने को देवे। पानी न पीकर नारियल का पानी पीने को देवे। ठंडा उपचार सभी मना है। इस बीमारी में धान के लावे का मांड या सिंघाड़े का आटा आदि हलका भोजन करना चाहिये। भूक न रहने पर कुछ भी न खाना चाहिये।

मेदरोग

मेदरोग इतना भयानक रोग नहीं कि, जितना राजयक्ष्मा (तपेदिक़) रोग है, लेकिन सच पूछा जाय तो राजयक्ष्मा रोग प्रथमावस्था में साध्य और द्वितीयावस्था में कष्टसाध्य अवश्य है। लेकिन मेदरोग की ओषधि का अभी तक किसी भी वैज्ञानिक ने आविष्कार नहीं किया। जितने भी रोग हैं, उनमें स्त्री-प्रसंगादि अपथ्य है। लेकिन ये ही एक मेदरोग ऐसा रोग है जोकि स्त्री-प्रसंगादि पथ्य बतलाता है। जितना भी स्त्री-सहवास किया जाय, कुछ देर के लिये स्वस्थता उपलब्ध होती है। लेकिन सच पूछा

जाय तो क्या यह उपचार पथ्य है ? कदापि नहीं । हां, कुछ देर के लिये रोगी को जो बेचैनी रहती है, वह दब जाती है। इस दुष्ट रोग से ग्रसित रोगियों से निवेदन है कि वह अवश्य इस हठयोग का अभ्यासी बन जावे और देखे कि कितनी शीघ्रता से उनका यह रोग समूल नष्ट होता है। अगर ४० दिन तक भी रोगी ने इस अभ्यास को किया तो रोगी पूर्ण दीर्घजीवी हो जायेगा। अगर आपको अपना जीवन प्यारा है और आप इसी जीवन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं तो क्यों नहीं इस हठ-योग की क्रिया का अवलम्बन करते हैं। प्रथमावस्था में रोगी को चाहिये कि कुछ क्षण को किसी अपने आत्मीय जनों का सहारा लेकर इस विपरीति करणी मुद्रा को करें, क्योंकि मेदरोग के रोगी की नस नाड़ी अशक्त रहती हैं। इसलिये रोगी को किसी अन्य पुरुष का सहारा लेना आवश्यक है। मुझे आशा ही नहीं बल्कि अनुभव प्राप्त है कि रोगी अपने स्वास्थ्य को यावज्जीवन के लिये ठीक कर लेगा। अगर कुछ और दिन लगे तो क्रमशः अभ्यास को बढ़ाता जाय।

पथ्य

मेदा रोग में रूखा और हलका भोजन, व्यायाम, घोड़े की सवारी, पर्यटन, स्त्री-सहवास और मर्दन क्रिया हितकारी है। कफकारी वस्तु, घी और मछली-मांस खाना, दिन में सोना, आलस्य से पड़ा रहना अहितकर है।

राजयक्ष्मा (तपेदिक़)

राजयक्ष्मा इतना भयंकर रोग है कि शायद ही कोई

ऐसा रोग हो, जो इसकी समानता रखता हो। इसलिये रोगी को चाहिये कि प्रथमा या द्वितीयावस्था में ही अपना उपचार कर लेवे। राजयक्ष्मा रोगी की तीन अवस्थाएँ होती हैं। प्रथमावस्था का रोगी स्वभावतः अति भोजी हो जाता है और विना पचाये ही उसे पाखाना कर देता है। यहां तक कि खाते, सोते, उठते उसकी मलवाहिनी नाड़ी मल को रोकने में असमर्थ हो जाती है। ऐसी दशा में रोगी अपने रोग का ठीक पता नहीं देता। कभी २ रोगी को स्वप्नावस्था में धातुक्षय की नाशकारी व्यथा भी सताती है। रोगी केवल अपना रोग धातुक्षय बतलाता है। ऐसी दशा में यदि रोगी इस हठयोग का अभ्यासी बन जावे तो कोई ऐसा कारण नहीं कि रोगी का रोग शीघ्र ही पयान न करे। क्योंकि विपरीति करणी मुद्रा एकमात्र फेफड़े की निर्बलता को दूर करती है। और पाचनक्रिया इतनी प्रबल हो जाती है कि भोजन करते ही भूक लगती है। कारण यह है कि विपरीति करणी मुद्रा से सारे शरीर का बोझ एकमात्र कंठगत हो जाता है और गर्दन पर भारी बोझ पड़ने से रीड़ की हड्डी पसलियों की हड्डियों को ठीक स्थान पर लाना और फेफड़े को विकाश देना इस करणी का प्रधान उद्देश्य है। अगर ४०—५० दिन तक नित्यमेव अभ्यास किया जाय तो फुसफुस को विकसित करके पूर्णतः स्वास्थ्य प्राप्त होता है। अगर फेफड़े ने पूर्ण विकाश पा लिया तो कोई कारण नहीं कि, यह दुष्ट रोग रोगी को न छोड़ देवे। क्योंकि फेफड़े का संकुचित होना ही रोग का प्रधान कारण है। इसलिये इस दुष्ट रोग के आक्रमण-कारी व्यक्ति से विशेष कर निवेदन है कि अवश्य ही वह

इस रोग से मुक्ति पाने के लिये सहस्त्र औषधियों को छोड़कर एकमात्र इस विपरीति करणी का अभ्यास करे और निम्न प्रकारेण पथ्य सेवन करे।

पथ्यापथ्य

दिन में पुराने महीन चावल का भात, परवल, गूलर, कौहड़ा, कच्चा केला और बैंगन आदि की तरकारी, मूंग और मसूर की दाल का जूस, खट्टे पदार्थों में थोड़ा सा कागजी नीम्बू का रस, कुछ मात्रा में अमचूर का सेवन, तेज ज्वर अथवा कफ की अधिकता रहने पर दिन में भात न खाकर केवल रोटी अथवा साबूदाना खाना चाहिये। रात में सोते समय दूध पी लेना चाहिये। भूख का न लगना पेट में किसी प्रकार गड़बड़ी होने से दूध के साथ सूजी, जौ का आटा, बार्ली, सिंघाड़े का आटा या आरारोट पानी में सिझाकर दूध के साथ खाना हितकारी है। अन्यान्य लवण और तेल के बदले घी और सेंधा नमक के साथ तरकारी भून कर खाना चाहिये। जलपान में जहां तक बन सके सहज कुम्हड़े की मिठाई, किसमिस के दाने, अनार, पिएड, खजूर, बादाम, अंगूर, सिंघाड़ा, मिश्री और थोड़ा मिश्री का हलुवा खा सकते हैं। गर्म पानी ठंडा करके पीना और आवश्यकतानुसार सात आठ दिन में गर्म पानी में अँगोछा भिगोकर शरीर को साफ करना चाहिये। स्नान जितना कम किया जाय उतना ही अच्छा है। शरीर में गर्मी मालूम पड़ने से गर्म पानी में अँगोछा भिगोकर शरीर को पोंछ सकते हैं। शरीर को गर्म कपड़े से ढके रहना उचित है। फ़लालेन का कुर्ता और मोजा हमेशा पहने रहने से विशेष

उपकार होता है। सूखे और हवादार घर में रहना चाहिये। रोगी के घर में अन्य किसी जन को सोना न चाहिये।

छागमांसं पयः छागं छागं सर्पिः सशर्करम्।
छागोपसेवा शयनं छागमध्ये तु यक्ष्मनुत्॥

बकरे का मांस खाना बकरे का दूध पीना और बकरी के घी के साथ चीनी मिलाकर खाना बकरे की सेवा करना बकरों के बीच सोना यक्ष्मारोगी के लिये विशेष उपकारक है।

यक्ष्मारोगी को विपरीति करणी मुद्रा करने के पश्चात् निम्न उपचार करना चाहिये लेकिन इस रोग के रोगी को जब ही भूक लगे तबही इस हठयोग के करने के पश्चात् ही नीचे लिखा कलेवा करना चाहिये।

शर्करामधुसंयुक्तं नवनीतं लिहन् क्षये।
क्षीराशी लभ्यते पुष्टिं तुल्ये चैवाज्यमाक्षिके॥

अर्थात् विपरीति करणी राजयक्ष्मा रोगी को चीनी और शहत के साथ मक्खन अथवा थोड़ा शहत और अधिक घी मिलाकर चाटे, ऊपर से बन सके तो बकरी का दूध, नहीं तो गाय का दूध पीवे। इससे यक्ष्मा की दुर्बलता दूर होकर शरीर पुष्ट होता है। *

---

* शीर्षासन अर्थात् विपरीति करणी मुद्रा के अभ्यासी को चाहिये कि प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर सन्ध्या बन्दनादि नित्य कर्म करने के पश्चात् ही निराहार में योग साधन करे, और योग साधन के पश्चात् कुछ विश्राम लेकर दुग्धादि पुष्टिकर पदार्थ सेवन करे, अन्यथा भोजन करें।

शिररोग

यह रोग अति बोलने से अति विचार करने से अति पढ़ने से माथे में दर्द होना जगसा कार्य करने पर माथा भारी होना सिर में सुई भोंकने का-सा कष्ट होना इत्यादि प्रकार से शिररोग होता है, और कई कारणों से शिर में दर्द होता है। इसलिये शिररोग के रोगी को चाहिये कि इस विपरीति करणी मुद्रा को करे। आठ या दस दिन के अभ्यास से ही यह रोग दूर भागता है। शिर के लिये तो विपरीति करणी मुद्रा को कहना ही क्या है।

इसी प्रकार और भी कई रोग इस विपरीति करणी मुद्रा से जाते हैं, निश्चय जाते हैं, अवश्य जाते हैं। करें देख अनुभव करें; क्योंकि इस योग का एकमात्र उद्देश है मल को साफ करना और भूक को बढ़ाना।

प्रथम लिखी विधि अनुसार शीर्षासन करने से यह रोग समूल नष्ट हो जाते हैं क्योंकि इस आसन का प्रधान उद्देश जीवन पोषक तत्व को यथाविधि भरपूर करना है। इसकी एक विस्तृत पोथी तयार हो रही है, लेकिन पाठकों की जानकारी तथा लाभ के लिये हमने उपक्रमणिका और भी बढ़ादी है, ताकि पाठक इस पुस्तक से भी वंचित न रह सकें।

१—पाकस्थली को ग्रहणी नाड़ी कहते हैं। अग्निमान्द्य आदि कारणों से ग्रहणी नाड़ी दूषित होकर दुर्गन्धयुक्त होकर मल को बाहर निकालती है। अनेक स्थलों पर यह अतिसार का रूप धारण कर लेता है। शीर्षासन इसके लिये अमोघ अस्त्र है।

२—गलित कुष्ठ छोटे बच्चों से ही प्रवेश हो जाता है। छोटे २ खुश्क दाग निकलते हैं या मां बाप अज्ञानता से समझ नहीं सकते। अगर खुश्क दाग मालूम होने लगें तो शीर्षासन कराओ। क्योंकि यह दूषित रक्त को फूँक देता है। गौ मूत्र आध पाव नित्य पिओ।

३—अरोचक उसको कहते हैं जो भूक लगने पर खाने की इच्छा नहीं रहती। मुंहमें कसेलापन रहता है। शीर्षासन अरोचक के लिये रामबाण है।

४—मलद्वार के भीतर मान्सांकुर बढ़ जाने से मल निकलने में बड़ी कठिनता होती है। शीर्षासन अर्श को नाश करता है। बहुत लोगों को इससे फायदा हुआ है।

५—अजीर्ण और अग्नि मान्द्य में परिपाक शक्ति नष्ट हो जाती है। शीर्षासन अग्नि को प्रज्वलित करता है। भूक बढ़ाता है।

६—हिक्कास्वास और शीर्षासन—प्राण और उदान वायु कुपित होकर हिक २ शब्द करता है। यह रोग प्राण नाशक है। लेकिन शीर्षासन को बड़े २ महात्माओं ने स्वासरोग के लिये हितकर बतलाया है और हमने भी आज़माया है।

७—भ्रममूर्छा सन्यास – जिस रोग में एकाएक अनुभव शक्ति और चैतन्य लुप्त हो जाता है—उसको शीर्षासन जड़मूल से उखाड़ फेंकता है और सदा के लिये आराम कर देता है।

८—उन्माद (पागलपन)—बुद्धि भ्रष्ट, चित्त चंचल, दृष्टि विकृत काम का कुछ विचार नहीं, नींद न आना आदि कारणों को शीर्षासन अति फलप्रद है। अगर जबरन भी शीर्षासन कराया जाय तो कराना चाहिये।

९—अपस्मार मिर्गी—साधारणतया इसमें एकाएक ज्ञान का लोप हो जाता है और ८-१०-१५-३० दिन में अकस्मात यह रोग आन दबाता है। इस लिए शीर्षासन करना चाहिए।

१०—जिस रोग में पेट के भीतर सूई भोंकने की तरह पीड़ा हो उसे शूल रोग कहते हैं। यह रोग शीर्षासन से ४—५ दिन में ही चला जाता है।

११—गुल्मरोग (वायु गोला) हृदय दोनों पार्श्व नाभि और पेडू के मध्य में जो गांठ उत्पन्न होती है उसको शीर्षासन एक महीने में भस्म कर देता है।

१२—धातु क्षीण प्रमेह—यह बीस प्रकार का बतलाया गया है। जो लोग दवाई खाते २ हार चुके हैं उन्हें चाहिये कि शीर्षासन करें। उनका वीर्य्य मस्तिष्क और फेफड़े में प्रवेश हो जाता है और वीर्य्य गाढ़ा स्थम्बन शक्ति प्रदाता बनाता है।

१३—वृद्धि रोग—वातादि दोष कुपित होकर पहले पट्ठे में शोथ उत्पन्न होता है और उस में दर्द होता है और फिर अण्डकोष बढ़ने लगते हैं। शीर्षासन करो तमाम दूषित जल शोषण हो जाता है।

१४—गलगण्ड—वायु, कफ, मेद दूषित होकर गले में अण्ड-कोष की भांति जो लम्बा शोथ उत्पन्न करता है उसे गलगण्ड कहते हैं। शीर्षासन गले को दबोच देता है और गण्ड को साफ करता है।

१५—भगन्दर और गुह्य प्रदेश में एक फोड़ा उत्पन्न होकर जो फट जाता है उसे भगन्दर रोग कहते हैं। शीर्षासन भगन्दर रोग को सुखा देता है।

१६—यकृत और प्लीहा और शीर्षासन—यकृत प्लीहा उदररोग के अन्तर्गत है। इसलिये इसकी व्याख्या यहां न कर सिर्फ शीर्षासन आरम्भ कर देना चाहिये। बीस इक्कीस दिन में ही यकृत प्लीहा नष्ट होने लगता है।

अतिरिक्त इससे शीर्षासन आन्तरिक सब ही व्याधियां नष्ट करता है।

नोट—शीर्षासन किन बिमारियों को किस प्रकार नष्ट करता है और क्यों इतना सर्वगुण सम्पन्न श्रेष्ठ आसन है इसकी विशेष व्याख्या देखनी हो तो "शीर्षासन" पुस्तक मंगाइये जो अब छप रही है। प्रथम ग्राहक होने वालों को पौन कीमत में मिलेगी।

लेखक—

प्राणायाम विधि

श्वास शरीर के भीतर एक आवश्यक पदार्थ है। और बहुत से लोग इसी ही श्वास को आत्मा समझते हैं। ये लोग श्वास के अतिरिक्त आत्मा के सत्व को नहीं मानते। इसलिये कि मनुष्य शरीर के भीतर श्वास का आना जाना ही सब कुछ है। या उसके अतिरिक्त नाश न होनेवाली कोई और हस्ती है कि जिसके विना श्वास अपना कार्य चला सके। आंख देखती है, मुँह बोलता है, और जब आदमी मर जाता है तो वायु वायु में मिल जाता है, तो शेष कुछ नहीं रहता या शरीर को शक्ति पश्चात् भी यह अविनाशी प्राण-शक्ति रहती है? या मृत्यु के पश्चात् क्या होता है। ये किन २ कारणों से गुजरती है या मृत्यु के पश्चात् भी आत्माओं से प्रश्नोत्तर हो सकता है या नहीं। अगर हो सकता है तो क्यों न अलग हस्ती मान ली जावे। ये अलग २ विषय हैं इसलिये कि प्राणायाम के विषय में इसका समावेश नहीं आया और इसको संगति मिलती है।

मैं तो केवल यह बतलाना चाहता हूं कि श्वास शरीर का एक आवश्यक धर्म है लेकिन यह जितना आवश्यक भाग शरीर का है उतना ही यह हमारे आधीन भी नहीं है। हमें इसका इतना भी अधिकार नहीं कि हम जब चाहें श्वास को कुछ देर के लिये रोक रक्खें या जितने समय के लिये कतई छोड़ दें। जब चाहें वायु को खींचें या जब चाहें उसे छोड़ दें।

इस विषय के जिज्ञासुओं से मैं इतना ही बतला सकता

हूं, कि अगर योगी इस पर अच्छे प्रकार अभ्यास काबू पा लिया तो निश्चय है कि योगी इस पर विजय पा सकता है।

लेकिन इस अध्याय में इस मजमून पर इतना ही लिखना है कि योगी को जितनी शक्ति की आवश्यकता है तथा मैंने जितना भी अधिकार इस पर पा लिया है उतना ही पाठकों के भेंट कर सकता हूं। तथा एक गृहस्थ अपना प्रति-दिन का कार्य सम्भालते हुये इस आवश्यक कार्य को भी करता हुआ राजयोग का अभ्यासी बन सकता है।

प्राणायाम का अभ्यास जो मैं लिख रहा हूं प्रत्येक गृह-स्थ जीवन के अभिलाषियों के प्रति लिख रहा हूं। क्योंकि इस उपयोगी विषय को छोड़कर गृहस्थ सुख हो ही नहीं सकता है। मैं अपने जीवन में इसको अच्छे प्रकार अनुभव कर चुका हूं कि गृहस्थ सुख का मज़ा जितना इस प्राणा-याम में स्यात् ही अन्य क्रियायें इसमें इतनी सहायक हो सकती हों। स्त्री सहवासादि जितने भी शरीर को अनिष्ट-कारी हैं प्राणायाम के अभ्यासी को कभी भी क्षति नहीं पहुंचा सकते। प्राणायाम से जहां शरीर की अतुलशक्ति बढ़ती है उतना ही उसमें एकाग्रता की अधिकता हो जाती है और जहां जिस मनुष्य ने एकाग्रता पर विजय पा लिया वहाँ उसने मनुष्यत्व का पता भी लगा लिया है।

प्रथम इसके कि आप प्राणायाम के अभ्यास को आरम्भ करें। आप एकान्त स्थान पर सुखासन से बैठकर दिन के दोनों समय एकाग्रचित्त होकर नियम बांधकर बैठ जाना चाहिये। प्रथम बायें नथुने से गहरी श्वास अन्दर को खींचो और विना भीतर अटकाये दाहिने नथुने से श्वास को धीरे २ तथा जोर से बाहर फेंको। इसी प्रकार दाहने

नथुने से श्वास को धीरे २ तथा बल प्रयोग से खींचो। यहां तक खींचो कि उदर हृदय कंठ तक वायु अच्छे प्रकार भर जावे और तत्क्षण ही बायें नथुने से वायु को धीरे २ तथा बल के साथ बाहर छोड़ दो। इस प्रकार आप ३०–४० प्राणायाम कर लो। इस अभ्यास को करते समय वायु को भीतर मत रोको। सात आठ दिन पश्चात् आप दूसरे अभ्यास को करें जब देखें आप कि दोनों नथुनों से बिना कोई कष्ट के पूरक और रेचक कर लिया करते हैं।

आसन

उपरोक्त अभ्यास अच्छे प्रकार हो जाने के पश्चात् आप प्राणायाम के अभ्यासी हो सकते हैं। इसलिये प्रथम आसन पर ही कुछ विचार करना होगा। बैठना उस विधि से चाहिये जिसमें सुगमता से अधिक समय तक बैठा जा सके। और इसके लिये "सुखासन" सबसे अच्छा आसन है। अर्थात् चौकड़ी लगा कर बैठ जाने को सुखासन कहते हैं। चौकड़ी लगाते समय यह ध्यान रहे कि बायां पांव नीचे रहे और दायाँ ऊपर हो। दाहिने पांव की एड़ी इन्द्रिय मूल पर (अर्थात् मूत्रेन्द्रिय के ऊपर लगी हों) लगी हो और बायें पांव की एड़ी मूत्रेन्द्रिय के नीचे और गुह्य द्वार के ऊपर सन्धि स्थान पर लगी हों दोनों हाथ घुटनों पर अधखुली जैसी होनी चाहिये। छाती और कमर सीधा खड़ा होना चाहिये ताकि प्राणायाम में किसी प्रकार का कष्ट न हो। इसी आसन को सिद्धासन, मुक्तासन, वज्रासन और गुप्तासन भी कहते हैं। यही सुगम आसन जिसमें सुख से बैठकर चिरकाल तक अपने साधन में लीन रह सकता है।

अभ्यास करने का स्थान

अभ्यास नगर से बाहर, दूर जाकर, खुले वायु में आकाश के नीचे करना चाहिये। अथवा अपने घर में केवल इसी प्रयोजन के लिये एक कमरा नियत करना चाहिये जिसमें इस साधन के सिवा और कुछ न हो। उसका नाम "सन्ध्या-मन्दिर" हो वह केवल इसी प्रयोजन के लिये काम में लाया जावे।

अभ्यास करने का स्थान ऐसा हो, जहां सिड़ न हो, और न मक्खी, मच्छर सताते हों। किसी प्रकार की दुर्गंध आदि भी निकट न हो। गीला स्थान अभ्यास के लिये अच्छा नहीं होता है। भूमि समतल सूखी और सुन्दर होनी चाहिये। उस कमरे में कोई ऐसा पदार्थ या तसवीरें ऐसी न हों जो आपके शरीर को चञ्चल कर दें। कमरा खुला और हवादार होना चाहिये। उस कमरे के वायु को अग्निहोत्र तथा धूप जलाकर शुद्ध कर देना चाहिये। इस प्रयोजन के लिये अगर फूल भी उस कमरे में रख लिये जायँ तो अत्युत्तम रहेगा। उस कमरे की शुद्धि पर पूरा २ ध्यान रखना चाहियं। बैठने के लिये मृगछाला कुशासन या ऊन का आसन व्यवहार में लाना चाहिये।

प्राणायाम का अभ्यास।

यह अभ्यास तीन प्रकार का होता है। (१) श्वास को अन्दर खींचना (२) श्वास को रोके रखना। (३) श्वास को बाहर फेंकना। इन तीनों अवस्थाओं को अपने वश में कर लेने को प्राणायाम कहते हैं।

आवश्यक सूचना।

प्रथम इसके कि पीछे बतलाई विधि अर्थात् पूरक और रेचक जब तक अच्छे प्रकार अभ्यास न कर लिया जावे तब तक प्राणायाम आरम्भ न किया जाय। जब तक आठ-दस दिन पीछे लिखे अभ्यास से आपकी नस नाड़ियों की क्रिया शुद्ध न हो जावे तब तक प्राणायाम विधि जो आगे लिखी जाती है न करे।

प्राणायाम।

अब प्राणायाम आरम्भ करो। श्वास को नासिका के बायें नथुने से पांच सेकण्ड (पल) पर्यन्त निरन्तर खींचो। अर्थात् शनैः२ श्वास को अन्दर खींचकर अपने अन्दर वायु से भर दो। फिर दस सेकन्ड तक अपने श्वास को बन्द रखो, और फिर शनैः २ छोड़ दो। जब अन्दर श्वास को रखो तो, यह ध्यान रखो कि तुम्हारे अन्दर श्वास से ओ३म् की ध्वनि निकल रही है। मन से ओ३म् का उच्चारण करो, और अपनी वृत्ति को उसके सुनने पर जमाओ। दस पन्द्रह दिन में यह अभ्यास समाप्त करो।

थोड़े से परिश्रम से ही श्वास का यह अभ्यास सुगम हो जायगा और तुम प्रथम कक्षा को समाप्त करके दूसरी कक्षा में पांव रखने के योग्य हो जाओगे।

दूसरी कक्षा।

श्वास को अन्दर लेने, और अन्दर ही उसको रोके रखने, और बाहर निकालने के समय को शनैः २ बढ़ाते रहो। श्वास अन्दर के जाने में ७ से दस सेकन्ड तक लगें और पन्द्रह

सेकन्ड तक रुका रहे, और बाहर निकालने में दस सेकन्ड तक लगे। इस अभ्यास को १ सप्ताह या डेढ़ सप्ताह निरन्तर करते रहने से तीसरी कक्षा में पग रक्खो।

तीसरी कक्षा।

श्वास अन्दर खींचने में दस पन्द्रह सैकन्ड लगें। अन्दर रोके रखने में १५ से २० सेकन्ड लगें, और बाहर निकालने में दस से पन्द्रह सेकन्ड लगें।

एक सप्ताह के अभ्यास में तुम यह कर सकोगे। इतना करते हुये तुममें से कुछ मनुष्यों को अपने शरीर की नाड़ियों की गति अनुभव होने लगेगी। तुम इसको करते रहो।

चौथी कक्षा।

श्वास अन्दर खींचने में पन्द्रह से बीस सेकन्ड, रोके रखने में बीस से तीस सेकन्ड और बाहर निकालने में १५ से २० सेकन्ड लगने चाहिये। दो सप्ताह के अभ्यास से तुम इसको भली भांति कर सकोगे।

पांचवीं कक्षा।

यह कक्षा तब तुम पूरी कर सकोगे, जब एक मिनट श्वास अन्दर खींचने में लगाओगे और दो मिनट विना कष्ट के अन्दर रोक सकोगे और एक या पौन मिनट श्वास को बाहर छोड़ने में लगाओगे।

सूचना नं० १—इन सब अभ्यासों के करने में ओ३म् पर अपनी चित्त-वृत्ति जमाओ। जब तुम पांचवीं कक्षा को समाप्त कर लोगे तो फिर आगे स्वयमेव उन्नति कर सकोगे।

यहां तक कि बिना कष्ट के श्वास को पांच मिनट तक खींचो, रोको और छोड़ दो। फिर समय नियत करने की आवश्यकता न रहेगी। इतना अभ्यास करने से ही तुमको एकाग्रता प्राप्त हो जायगी।

सूचना नं० २—प्राणायाम के अभ्यासों को यदि तुम दिन में ३ बार अर्थात् प्रातःकाल शौचादि आवश्यक कर्मों से निपटकर स्नान करने के पश्चात्, फिर मध्याह्न काल में, तत्पश्चात् सायंकाल, सूर्यास्त होते समय करो तो अत्युत्तम है। यदि तीन बार नहीं कर सकते हो तो सायं प्रातः दोनों समय ही करो। इनको करते समय घृत दुग्ध का सेवन करते रहो। खटाई लालमिर्च का सेवन न करो और ब्रह्मचारी बन सकने का प्रयत्न करो।

अभ्यास नं० २ की विधि।

उपर्युक्त ध्यान किस प्रकार जमाना चाहिये? क्योंकि वाक्यों को केवल सुन या पढ़ लेना व्यर्थ है। इसलिये अपनी उपासना के पश्चात् एकाग्रता से अपने ध्यान को एक वस्तु पर पूरी तरह स्थिर करो। जैसे कि तुम आरोग्यता की इच्छा करते हो, अथवा तुम सौन्दर्य के अभिलाषी हो, तो तुमको चाहिये कि धीरे से और उचित बल के साथ यह कहो कि "मैं सौंदर्य हूँ" इसमें इस रीति से लीन हो जाओ, मानो तुम यह अनुभव कर रहे हो कि सचमुच उसको पूर्णरूप से अनुभव करते हो।

नेत्र मूँदे ही अपने सम्मुख एक सौंदर्य की मूर्ति बनाओ, और कल्पना करो कि तुम्हारा वक्षःस्थल, तुम्हारी भुजाएँ, तुम्हारा रूप वैसा ही सुन्दर और सुडोल बन रहा है। यदि

तुम दृढ़ संकल्प के साथ नियमपूर्वक ऐसा अभ्यास करोगे तो, थोड़े समय में ही अपने अन्दर आश्चर्यजनक परिवर्तन अनुभव करोगे।

आरोग्य, धन, सम्पत्ति, ज्ञान, सुख और शांति, जिस वस्तु को तुम प्राप्त करना चाहते हो, उसी पर मन को एकाग्र करके अपनी वृत्ति को स्थिर करो और समस्त शक्तियों को उसी ओर दौड़ने दो।

जिस वस्तु का चिन्तन करो उसी में लीन हो जाओ। उसको अपने चिन्तन की प्रबल शक्ति से अपना बना लो। तब वह वस्तु तुमको प्राप्त हुए बिना न रहेगी।

इन सारे अभ्यासों को आरम्भ करने, और समाप्त करने के पश्चात् उस प्रभु परमात्मा की प्रार्थना किया करो, और उनसे उन आध्यात्मिक ज्ञान में सफल होने के लिये बल मांगा करो। वही सब शक्तियों के स्वामी हैं, और उन्हीं से सब शक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

इस बात को स्मरण रखो कि जितनी एकाग्रता अधिक होगी, उतनी ही सफलता शीघ्र और निश्चयात्मक होगी। किसी ने क्या अच्छा कहा है कि—

With perfect concentration of mind comes all power and all happiness.

अर्थात् एकाग्रता से सम्पूर्ण शक्तियाँ और सुख प्राप्त होते हैं। इस आकर्षणीय विद्या में वही नियम काम करते हैं जो पातञ्जल योगदर्शन में इस प्रकार वर्णन किया गया है।

"जब योगी निरन्तर एक वस्तु पर ध्यान जमाकर उस ध्यान को निरन्तर जारी रखने और उसमें अपने आपको लीन करने की योग्यता प्राप्त कर लेता है, अर्थात् धारणा,

ध्यान, समाधि, जिसको योग में "संयम" कहा है प्राप्त कर लेता है तो समस्त शक्तियाँ उसके अधीन हो जाती हैं।" योगी के पास बड़ा शस्त्र है। ध्यान को लगाने के लिये प्रथम स्थूल पश्चात् क्रम २ से सूक्ष्म वस्तुओं पर ले जाना चाहिये इसप्रकार क्रमशः तुम अपनी एकाग्रता को स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर ले जा सकते हो। इसी विधि से जिस वस्तु की तुमको आवश्यकता होगी वह तुमको प्राप्त होगी।

यदि तुम मित्रता पर अपने चित्त की एकाग्रता जमाओगे तो संसार की मित्रता तुमको प्राप्त होगी। यदि हस्ती के बल पर संयम करोगे तो हस्ती का बल तुम्हें प्राप्त होगा। पातञ्जल योगदर्शन, विभूतिपाद।

इसप्रकार योगी स्थूलसंयम से सूक्ष्मसंयम पर अपनी चित्त-वृत्ति की एकाग्रता कर सकता है। केवल अभ्यास और मन की एकाग्रता पर विजय पाता है। इसके निरन्तर अभ्यास करने से आप भूत, भविष्यत् और वर्तमान जान सकते हैं। जिस वस्तु पर चाहे शासन कर सकता है, और जिसे चाहे विजय कर सकता है। उस समय सिंह भेड़ बन-कर उसके चरणों में बैठेगा, और उसकी सम्पूर्ण इच्छाएँ केवल इच्छा करने से ही पूरी हो जायँगी।

आत्मिक शक्तियाँ विना एकाग्रता किये उपलब्ध नहीं हो सकती हैं। सचमुच सांसारिक जितने कार्य हैं, उनमें एक भी विना एकाग्रता के उपलब्ध नहीं कर सकता है। विद्यार्थी अगर अपने पाठ को ध्यान देके न पढ़े तो, कभी वह अपने पाठ को स्मरण नहीं कर सकता है, व्योपारी अगर अपने व्योपार पर आकर्षित नहीं है तो वह कदापि लाभ नहीं उठा सकता है। इसी प्रकार कोई कार्य हो जब तक चित्त-

वृत्ति एकाग्र न की जाय, तब तक वह अपने कार्य में सफल नहीं हो सकता है। जब सांसारिक कार्यों की यह दशा है, तो स्वतः ही समझ में आ जायगा कि आत्म-संयम शक्ति को कितनी एकाग्रता है। योग के अर्थ ही जोड़ देने के होते हैं। अर्थात् अपनी प्रबल इच्छाओं को क़ाबू करना, और एकमात्र मन को उस परमब्रह्म परमात्मा में एकाग्र कर देना, और अनुभव करना, अर्थात् मन को उस तरफ़ लगा देना। भगवान् पतञ्जलि ने योगशास्त्र में इसप्रकार लिखा है कि "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" अर्थात् अपनी इच्छाओं पर विजय पाना योग कहलाता है। इस बात की प्राप्ति के लिये महान् से महान् एकाग्रता की आवश्यकता है; आशय यह है कि सकल कार्य साधन की कुञ्जी एकाग्रता है।

जिस प्रकार बड़े क्षेत्रफल में फैला हुआ और आहिस्ता२ बहते हुए जल की कोई सामर्थ्य नहीं दीखती, लेकिन वही जल समूहरूपेण एक छोटे से मार्ग से निकाला जाता है तो आश्चर्ययुक्त शक्ति प्रदाता हो जाता है, जिससे पनचक्कियाँ तक चलतीं, और कई प्रकार के कार्य साधन हो सकते हैं। इसलिये मन की एकाग्रता ही इस लोक परलोक को सुधारनेवाली है।

इन आठ प्रकार के अभ्यासों को निरन्तर करने से भी शरीर हृष्ट-पुष्ट बना रहता है, और विचार स्फुरित होते हैं।

प्रथम विधि

(१) सीधे दिवाल के सहारे खड़े हो जाओ। सारे शरीर को ठीक सिधाई पर खड़े रखो। दहिने हाथ को नाक पर ले जाओ, और अब यह मालूम कर लो कि श्वास का नाक

के कौन छिद्र से आवागमन होता है। इसलिये अँगूठा और मध्यमा जो कि नाक पर लगा हो उसी से यह विधि करनी चाहिये । अब जोर से नाक से श्वास को बाहर फेंको, लेकिन इतने जोर से फेंको कि किसी प्रकार भी वायु का कण हृदयस्थल में न रह जावे। यह पहले ही ज्ञात कर लेना चाहिये (जब कि श्वास को जोर से बाहर फेंक रहे हो) कि नाक के किस मार्ग से प्राण वायु का आवागमन होता है। उसी मार्ग से धीरे २ वायु को अन्दर खींचे। परन्तु इतना खींचे कि उदर अर्थात् नाभि से प्राण को भरता २ गले (कण्ठ) तक परिपूर्ण वायु भर जावे। अब कुछ क्षण ही प्राण को अटका रक्खे और नाक के जिस स्वर से तुमने प्राण को खींचा है उससे विपरीत अर्थात् जिस स्वर से तुम्हारा प्राण वायु बंद है, छोड़ने का यत्न करो। हाथ जो पहले ही नाक पर अँगूठा और मध्यमा से पकड़ा हुआ है, अँगूठा या मध्यमा जिस तरफ से तुमने प्राण को खींचा है, दाब दो और जिस तरफ आपका स्वर बंद है, अर्थात् वायु नहीं चलता है छोड़ने का प्रयत्न करो। क्योंकि एकबारगी प्राण को छोड़ देना यही बीमारी का कारण है। जो लोग कहा करते हैं कि प्राणायाम से बीमारी भी हो जाती है इसलिये कहता हूँ कि प्राण को एकबारगी नहीं छोड़ना चाहिये। शनैः २ नाक के उस स्वर से जिस तरफ के प्राण का आवागमन नहीं है छोड़ना चाहिये। इस प्रकार आप एक दिन में पंद्रह बार और बीस बार तक कर सकते हैं। प्रातः और सायं इस प्रकार अभ्यास को बढ़ाते चलो। जब आप अच्छे प्रकार श्वास प्रश्वास लेना देना कर सकते हैं तो फिर आप दूसरी विधि पर पदार्पण कर सकते हैं, डरने की कोई

बात नहीं, केवल सावधानता इस बात की चाहिये कि श्वास को एकाएक छोड़ना न चाहिये फिर तो किसी बात का डर नहीं। यह अभ्यास एक महीने तक करो।

दूसरी विधि

(२) दिवाल की ठीक सिधाई पर खड़े हो जाओ। अब आप पूर्वोक्त प्रकार से प्राण को धीरे २ खींचो। यहाँ तक खींचो कि उदर, छाती कण्ठ में प्राण का भंडार भर जावे। अब जब कि, प्रथम श्रेणी का अभ्यास ठीक हो गया है तो, अब आप कुछ देर के लिये कुम्भक अर्थात् प्राण को भीतर ही रोके रखना, तत्पश्चात् धीरे २ छोड़ना। कुम्भक उस क्रिया को कहते हैं कि जिसमें प्राण भीतर ही भीतर खींच कर जितनी देर हो सके रोकने का प्रयत्न करे, और उसी प्रकार छोड़ देवे, जिस प्रकार आपको प्रथम अभ्यास बतलाया है याने शीघ्रता से न छोड़े। इस प्रकार अभ्यास को बढ़ाते २ आप सौ, दो सौ, तक मन ही मन गिन जायें। जब आप कुम्भक में सौ, डेढ़ सौ, दो सौ तक गिन सकें तो अब आपको प्राणायाम का अभ्यास ठीक हो गया है। यह अभ्यास क्रमशः तीन चार सप्ताह तक कर सकेंगे।

तीसरी विधि

(३) किसी दिवाल के सहारे ठीक खड़े हो जाओ। पूर्वोक्त प्रकार से प्राणायाम विधि जो द्वितीय श्रेणी में बतलाया गया है, उसी प्रकार करो। जब ज्ञात कर लिया कि

योगी का कुम्भक अच्छी प्रकार से होने लग गया है तो, योगी को चाहिये कि जिस प्रकार धीरे २ श्वास भीतर को खींचा है, अब कुछ देर के लिये स्तम्भित रहो और अपने दोनों हाथों को कन्धों के ऊपर झुकाओ। प्रथम या तीन दिन तक केवल दो बार से अधिक मत उठाओ, परन्तु जब पूर्णतः अभ्यास ठीक होगया तो दस से बीस बार तक करो। अब आपके शरीर में एक प्रकार की बिजली की जैसी चमक दौड़ने लग गई है। और कुछ थकावट सी मालूम देती है यह अभ्यास २१ दिन तक करते रहो।

चौथी विधि

(४) जब आप तृतीय श्रेणी का अभ्यास करते हैं तो, थकावट का लगना आवश्यक है। इसलिये यह प्राणायाम योगी की थकावट दूर करने के लिये बतलाया जाता है। जब आप किसी भी प्राणायाम को करते हैं, तब पीछे थकावट लगती है, इसलिये योगी को चहिये कि सुस्त होने पर ज़मीन पर या बिछौने पर विना तकिया के चौताल लेट जाओ, अर्थात् चारों हाथ पांव छोड़ कर चित्त लेट जाओ, और कुछ मिनट तक योंही पड़े रहो। जब देखो कि आपका चित्त शांत हो गया तो नाक के एक ही स्वर से श्वास को जोर से खींच लो, इतना जोर से खींच लो कि पेट से लेकर गले तक खचाखच श्वास भर जावे। कुछ देर रोके रखो अब आप मुँह को सुकेड़ लो और ऐसा सुकेड़ लो कि सीटी बजाने का जैसा। अब इस प्रकार

जोर से श्वास को मुँह के रास्ते से बाहर फेंको कि सारा बल मुँह को सुकेड़ने में, और वायु को बाहर फेंकने में लगे। हवा को बाहर फेंकने में १५ सेकन्ड तक लग जाना चाहिये इस प्रकार आप ४—५ बार करोगे तत्क्षण आपका सारा शरीर स्वस्थ हो जायगा। मुँह से हवा रुक २ करके छोड़ो।

यदि आप दिन में बहुत काम करते हैं, अथवा बहुत चल कर थक गये हैं तो, आप थकावट दूर करने के लिये इसी प्राणायाम को कर सकते हैं। अगर आपको किसी दिन रात को नींद न आती हो तो भी आपको विना तकिया के सहारे सोते समय गहरा से गहरा प्राणायाम द्वितीय श्रेणी का ४-५ बार कर लो तत्पश्चात् आप इस चतुर्थ श्रेणीवाले प्राणायाम को ४-५ बार कर लो, तब देखोगे कि कितनी गहरी नींद आती है। यहाँ तक नींद आजायगी कि योगी को इस लोक परलोक की कुछ भी सुध न रहेगी। इसप्रकार योगी अपने जीवन को सुखमय बना सकता है। यह अभ्यास थकान दूर करने के लिये सदा करना चाहिये।

पाँचवीं विधि

(५) अब आप दिवाल के सहारे पीठ भिड़ाकर ठीक सिधाई पर खड़े हो जाओ। पूर्वोक्त प्रकार से प्राणायाम कुम्भक कर लो। अब आप दोनों हाथों को उंगलियों को तान-कर कन्धे की बराबरी पर लाओ। अब धीरे धीरे उंगलियों को सुकेड़ो और मुट्ठी बांध लो। दस बारह बार मुट्ठी बांध लो और धीरे २ खोलो। इसप्रकार करते २ अब आप दोनों हाथों को सिधाई में लाकर छाती के सामने दोनों मुट्ठियों

को भिड़ा लो और दस पन्द्रह बार कर लो। इसप्रकार भी जहाँ तक हो सके कर लो। लेकिन कुम्भक प्राणायाम में ही यह क्रिया होनी चाहिये, और तब ही यह क्रिया हो सकेगी जब आपको कुम्भक का अच्छा अभ्यास हो जायगा। तब फिर चतुर्थ श्रेणी का प्राणायाम कर लो, और फिर थोड़ा आराम करलो शीघ्र स्वस्थ हो जाओगे।

छठी विधि

(६) उपरोक्त अभ्यासों को करके, तब योगी इस योग साधन पर लग सकता है। यह योग कुछ कठिनता रखता है। इसलिये योगी को चाहिये कि पूर्वोक्त पाँचों अभ्यासों को जब तक परिपक्व न कर लेवे, तब तक कदापि इसमें हाथ न डाले।

यह योगसाधन इसप्रकार किया जाता है कि, किसी दिवाल के ३ फ़ीट की दूरी पर दिवाल की तरफ़ मुँह करके खड़े हो जाओ। पूर्वोक्त प्रकारेण नाक से धीरे २ श्वास खींच लो, यहाँ तक खींच लो कि नाभि से गले तक खचा-खच हवा भर जावे। अब दोनों हाथों को अपने सामने सीधे तान दो, और हाथ के बल दिवाल पर सहारा लो। अब धीरे २ दिवाल पर छाती को भिड़ाने का प्रयत्न करो, और फिर हाथों को बराबरी पर ले जाओ। इसप्रकार जब तक आपकी छाती में प्राण है, तब तक इसी प्रकार छाती को दिवाल पर ले जाकर वापिस सिधाई पर लाओ। इस प्रकार तीन, चार बार आप प्राणायाम से भरपूर कुम्भक में इसी प्रकार हाथों को दिवाल से टेककर छाती को दिवाल पर भिड़ाते चलें? जैसे कि व्यायाम करते समय व्यायामी

दंड का व्यायाम करता है । इस विधि को बन सके तो आजन्म किया करो।

जब आप अच्छी तरह थक जाओगे, तब अपने विश्राम-स्थान पर आकर फिर उसी प्रकार लेट कर, जैसा कि चतुर्थ श्रेणी का विश्राम प्राणायाम कर अपनी थकावट दूर करते आये हो, करलो, और कुछ देर के लिये ५-१० मिनट तक आराम करलो।

सातवीं विधि

(७) जब आपका योगसाधन पूर्वलिखित पूर्णतः परिपक्व हो चुका है, तब आप इस अभ्यास को आरंभ कीजिये। जब प्रातः सायं आवश्यक कार्यों से निवृत्त हो जाओ तब आपको चाहिये कि दोनों समय स्वच्छन्द सुन्दर रमणीक स्थान पर जाकर इस प्रकार योग साधन करें।

अब आपको सुन्दर साफ मैदान या बाग बगीचों में इस प्रकार योगसाधन करना चाहिये कि, साधारण सरपट चाल से चलो और पूरक करते २ दस गिन गये तो, कुम्भक में भी दस तक गिन गये तथा रेचक में दस तक गिन गये और बाह्य कुम्भक में भी गिनते गये। चलने की चाल बदस्तूर रखो। अर्थात् चलते हुए में तुम जितना भी कर सको प्राणायाम कर डालो, लेकिन एक बात इसमें यह विशेषता रखती है कि, जितना समय तुम पूरक में लगाओ उतना ही कुम्भक, उतना ही रेचक में और उतना ही बाह्य कुम्भक में। न्यूनाधिक समय मत लगाओ, अर्थात् चलते समय १ से ८ तक गिनते २ पूरक कर लिया तो ऐसा ही १ से ८ तक कुम्भक कर लिया अगर तुमने इस प्राणायाम को बढ़ाते २ सरपट दौड़ने में

भी अभ्यास कर लिया तो, आपके शारीरिक बल के अलावे दीर्घजीवी बन सकते हो। इसप्रकार योगी ने प्राणायाम करते, और दौड़ते हुए में अपने को थका दिया तो फिर वहीं पर कहीं स्वच्छ सुन्दर स्थान पर जाकर, पूर्वोक्त प्रकार का सुखदायक प्राणायाम करलो और अच्छी प्रकार करलो।

आठवाँ प्राणायाम

(८) अब योगी योग सिद्धि के कुछ २ निकट है, इसलिये अब जो योगसाधन बतलाया जाता है वह सर्वोपयोगी साधन है। अगर आपने इस अभ्यास को अच्छे प्रकार साधन कर लिया तो, निश्चय ही आप योग के निकट हैं। इस अभ्यास को "ताल" का प्राणायाम कहते हैं। यदि आपने इसे अच्छे प्रकार और श्रद्धाभक्ति से साधन किया, और एकमात्र अपनी आत्मा को शक्ति का भंडार समझते हुए ठीक निश्चयात्मक होकर शक्ति सन्तुलन कर रहे हैं तो, निश्चय है कि दूसरे को कुछ सहायता प्रदान कर सकते हो। इस साधन को पूर्णतः अभ्यास कर लेने से योगी दूसरे अस्वस्थ मनुष्य पर भी अपने प्राणायाम के बल से रोगी का रोग दूर करने का अलभ्य लाभ उठा सकता है।

रोगी का रोग दूर करने के लिये रोगी के दोनों हाथ अपने दोनों हाथों से मुट्ठी से मुट्ठी भिड़ा लो, और रोगी से भी कहो कि मैं तुम्हारे रोग को दूर करता हूँ, और रोगी निश्चयात्मक होकर यह विचार कर रहा है कि निश्चय ही योगी मुझे रोग से मुक्त कर रहा है। इसप्रकार योगी और रोगी दोनों एक ही विचार पर बैठकर योगी, रोगी

का दोनों हाथ पकड़कर ताल का प्राणायाम करते हुए, एकटक नेत्रों से रोगी के नेत्रों पर, टकटकी लगाए देखता है तो, अवश्य रोग दूर होगा। लेकिन विश्वास की नितान्त आवश्यकता है।

अगर योगी अपने भविष्य कार्य के लिये, अपने मन से कुछ प्रश्न करता है कि, मेरा अमुक कार्य कैसा होगा तो, योगी को चाहिये कि स्वच्छ सुन्दर पवित्र स्थान पर रात को सोते समय भूमि में अपना बिछौना बिछा दे, और एक लोटा सुन्दर साफ़ किया हुआ पानी का भरा शिर की तरफ़ रख छोड़े, और आप भी भोजनादि से निवृत्त होकर हाथ पांव मुँह को प्रक्षालन करके शयनालय में चित्त लेट जाओ और यही आठवां " ताल " का प्राणायाम कर डालो। इतना कर डालो कि शरीर अच्छे प्रकार थक जावे। जब थक जावे तो सुखदा प्राणायाम कर लो और सो जाओ। बस, आपको अवश्य फलाफल स्वप्न हो जायगा।

प्राणायाम इस प्रकार करो। अब आपको एक एकान्त कमरे में जाना होगा सुन्दर, साफ़, सुखदायक आसन बिछा लो, जिस प्रकार तुम्हें सुख हो, उसी प्रकार के आसन पर बैठ जाओ। अब आपको ताल का प्राणायाम करना है। ताल के प्राणायाम के अर्थ हैं जिसके चारों कोने सम हों अर्थात् १-२-३-४—१-२-३-४—१-२-३-४। इसके चारों कोण सम हो गये। इस प्रकार अब आप मनही मन गिनते हुए ४ तक पूरक करते हैं तो, मनही मन चार तक गिन कर कुम्भक कर लिया, और इसी प्रकार गिनते हुए रेचक भी और बाह्य कुम्भक भी, इस प्रकार बढ़ाते २ योगी आठ तक का

समकोण और बारह पन्द्रह तक का अभ्यास कर सकता है। जिस दिन १२-१३ तक का भी अभ्यास हो गया तो निश्चय है कि योगी ने योग साधन कर लिया, और ऊपर लिखी हुई सिद्धि भी प्राप्त करली। यह अभ्यास निरन्तर किए जाओ। और प्रतिदिन १५ से २० तक प्राणायाम करो।

पूज्य स्वामी नारायण पद्धति।

प्राणायाम-विधि।

पहला प्राणायाम

पद्मासन या किसी आसन से जिससे सुखपूर्वक उस समय तक विना आसन बदले बैठ सको, जितनी देर क्रिया करनी इष्ट है, बैठ जाओ इस प्रकार कि छाती, गला और मस्तिष्क, तीनों एक सीध में रहे, और धीरे २ नाक की राह से श्वास बाहर निकालो (रेचक) और उसे बाहर ही रोके रक्खो (बाह्य कुम्भक)

नोट—इस प्राणायाम से रेचक पूरक और कुम्भक, अर्थात् प्राणायाम की प्रत्येक क्रिया करने का अभ्यास होता है। जिससे आगे के प्राणायामों के करने की शक्ति मनुष्य में आती है। इस प्राणायाम का अभ्यास इतना बढ़ाना चाहिये कि जिससे दो मिनट के अन्दर श्वास रुक सके अधिक सामर्थ्य बढ़ाने से अधिक लाभ होता है परन्तु एक बात जिसे ध्यान में रखना चाहिये यह है कि प्रसन्नता ही से जितनी देर श्वास रुक सके रोके। चित्त पर तन्त्र नहीं करना चाहिये। अभ्यास से उत्तरोत्तर बाहर और भीतर दोनों ओर श्वास रोकने की अवधि बढ़ती है।

केवल यही एक प्राणायाम निरन्तर करने से योगी सुख का जीवन व्यतीत कर सकता है। अति निर्धन से निर्धन व्यक्ति अपने व्यवसाय में अर्थात् पत्थर तोड़ने में लकड़ी फाड़ने में कृषि आदि जितने भी कर्म हैं, उन सबमें, चलते-फिरते सोते-जागते कुछ भी कार्य हो, केवल गहरी श्वास नाक के रास्ते अन्दर खींचना और विना भीतर अटकाये धीरे २ तथा बल प्रयोग से श्वास को नाक ही के राह बाहर छोड़ देने से ही जीवन सुफल है।

अधिक देर बिना श्वास लिये न बैठ सको तो धीरे २ पूरक (श्वास भीतर खींचो) करो और अब श्वास को भीतर ही रोक दो (आभ्यन्तर कुम्भक)।

और अधिक समय तक कुम्भक (भीतर श्वास रोके रखना) न कर सको तो धीरे २ रेचक करो। इसी प्रकार अनेक बार अभ्यास करो। प्रत्येक क्रिया के साथ २ महा व्याहृतियों (प्राणायाम मन्त्र) का मानसिक जप करते रहो, जिह्वा से काम लेने की आवश्यकता नहीं *।

दूसरा प्राणायाम

शांति से पद्मासन अथवा किसी आसन से जिससे तुम सुखपूर्वक अन्ततक बैठ सको, बैठ जाओ और नथुनों से धीरे २ श्वास के द्वारा शुद्ध वायु भीतर की ओर खींचने लगो। पहले फेफड़े के नीचे के अधोभाग को भरो और प्रबल इच्छा रखो कि फेफड़े का अधोभाग वायु से भर रहा है। इससे कुछ पेट फूलेगा। इसके बाद उसी श्वास से फेफड़े के मध्यभाग में वायु पहुँचाओ। इस क्रिया तथा आगे की सब क्रियाओं के साथ इच्छाशक्ति को जोड़ते जाओ। इस क्रिया से पेट कुछ धपकेगा, और छाती कुछ उभरेगी। इसके बाद श्वास के तीसरे अन्तिम भाग से फेफड़े के ऊपरी भाग को भरो। इस क्रिया के प्रारम्भ करने से पहले कन्धों को कुछ ऊपर उठालो। इन तीनों क्रियाओं से पूरक पूरा होता है, इसके पूरा होने में लगभग आधा मिनट ख़र्च होता है।

---

* नोट—यह बात याद रखनी चाहिये भोजन पंचानती करना चाहिये। भोजन का प्रत्येक कण आक्सिजन के भीतर न घुल जावे इसलिये आमाशय और आँत में भी पर्याप्त वायु रहनी चाहिये।

इसके बाद कुम्भक करो। एक मिनट से अधिक अथवा कम से कम एक मिनट वायु को अन्दर रोको। इसके साथ इच्छा यह होगी कि फेफड़ों के समस्त कोष वायु से भर रहे हैं। फिर रेचक करके वायु को बाहर निकाल दो *।

तीसरा सुखद प्राणायाम

प्राणायाम करने से थकावट पैदा होती है उसे दूर करने के कारण इसका नाम "सुखद" है।

(१) प्राणायाम द्वितीय प्राणायाम की भाँति पूरक करो।

(२) उसी प्रकार इच्छाशक्ति को मोड़ते हुए कुम्भक करो।

(३) रेचक मुँह से करो, मुँह की स्थिति ऐसी करो जैसे सीटी बजाते समय होती है, और वेग से तीन से अधिक बार में थोड़ा २ श्वास बाहर फेंको।

पेट और आँत को भी हवा से भरना

चौथा प्राणायाम

(१) बायाँ पैर दाहिनी जाँघ पर रक्खो, गर्दन और पीठ सीधा खड़ा रक्खो। हथेलियों को घुटनों पर रख कर मुँह बन्द रक्खो।

---

* नोट—इस प्राणायाम का अभ्यास हो जाने पर दूसरे से साधारण ज्वर भी दूर किया जा सकता है। और यदि समय पर भोजन न मिले तो इस प्राणायाम को भूख ही में कर लेने से मनुष्य कुछ देर भूख के कष्ट से भी बच सकता है।

(२) दोनों नथुनों से धीरे २ परन्तु शीघ्रता करते हुए पूरक करो और विना कुम्भक किये ही रेचक करो।

(३) यह अभ्यास निरन्तर किये जाओ, जब तक थक न जाओ, अथवा पसीना न आवे।

(४) अभ्यास करते समय दृष्टि नासिका के अग्र भाग पर रक्खो।

(५) थक जाने पर दाहिने नथुने से पूरक करके कुम्भक करो और फेफड़े को खूब वायु से भर लो। इसके बाद बायें नथुनों से रेचक करके अभ्यास समाप्त करदो।

समस्त शारीरिक स्वास्थ्य के लिये

पाँचवाँ प्राणायाम

(१) बाएँ घुटने पर दायाँ और दाहिने घुटने पर बायाँ पैर रक्खो और दाहिने हाथ से पीठ की ओर से दायाँ पैर के अँगूठे को, और इसी प्रकार बाएँ हाथ से पीठ की ओर से बायाँ पैर का अंगूठा पकड़ो। यदि शरीर लचकीला और हलका न होने से अंगूठों को हाथों से न पकड़ा जायगा तो उन अंगूठों की ओर अधिक से अधिक दूर जितना तुम्हारा हाथ जा सके ले जाओ। शरीर खूब अकड़ा और तना रहना चाहिये।

(२) प्राणायाम प्रथम की भाँति पूरक कुम्भक और रेचक करो। इतना अभ्यास करो कि शरीर के रोंगटे अच्छी तरह खड़े मालूम होने लगें।

शक्ति प्राप्ति के लिये

छठा प्राणायाम

(१) पद्मासन से बैठो। मलेन्द्रिय को खूब रुई से भरदो।

(२) दाहिनें नथुने से पूरक करो।

(३) अपनी ठोड़ी को छाती पर रख कर सीधे हाथ से बायें पैर के अंगूठे को पकड़ो और माथे को किसी घुटने से लगाकर कुम्भक करो।

(४) बायें नथुने से रेचक करो।

(५) दूसरे प्राणायाम में बायें नथुने से पूरक और सीधे नथुने से रेचक करना चाहिये।

(६) यह अभ्यास क्रमशः बढ़ाते हुए एक घन्टे तक करना चाहिये।

संचारक क्रिया को नियमित करने और विचार शक्ति की वृद्धि के लिये

सातवाँ प्राणायाम

(१) पद्मासन से बैठो दाहिने हाथ से दाहिना पैर और बाएँ हाथ से बायां पैर पकड़ो।

(२) बायें नथुने से पूरक करो।

(३) फिर कुम्भक करो।

(४) फिर दायें नथुने से धीरे २ पूरक करो, बायें से रेचक करना चाहिये।

(५) इसी प्रकार आगे के अभ्यास में प्रत्येक प्राणायाम में रेचक और पूरक का क्रम बदल देना चाहिये।

(६) पसीना आने पर यह अभ्यास बदल देना चाहिये।

स्मृतिवर्द्धक इच्छाशक्ति उत्तेजक

आठवाँ प्राणायाम

(१) बायें पैर की एड़ी मलेन्द्रिय पर और दाहिने पाँव की जंघा जंघा पर रक्खो। ठोड़ी को छाती से लगाओ और आँखें बंद करलो।

(२) गहरा लम्बा श्वास लेकर रेचक करो।

(३) फिर कुम्भक और उसके बाद रेचक करो।

(४) यह अभ्यास बढ़ाते २ एक घन्टे तक ले जाओ।

शीत से बचने के लिये

नवाँ प्राणायाम

(१) बायाँ पाँव मलेन्द्रिय के नीचे रक्खो और ठोड़ी छाती पर दोनो हाथों को बढ़ाकर सीध में फैले हुए दाहिने पाँव को पकड़ लो और माथे को दाहिने घुटने से लगा दो।

(२) बायें नथुने से प्राणायाम दूसरे प्राणायाम की भाँति पूरक करके फेफड़े को वायु से भर दो।

(३) दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर जमा करके कुम्भक करो।

(४) फिर दाहिने नथुने से रेचक करो।

(५) एक घन्टा अभ्यास करने से पसीना आजाता है

और रक्त की गति भी बढ़ जाती है। पसीना आने पर अभ्यास बंद कर लेना चाहिये।

आमाशय के साधारण रोगों की निवृत्ति के लिये

दशवाँ प्राणायाम

(१) द्विजानु होकर बैठो और हाथों को हथेली फैला कर जंघाओं पर रक्खो वा इसप्रकार कि हथेली पीठ के ऊपर हों।

(२) प्रथम पूरक फिर कुम्भक फिर रेचक करो।

(३) यह अभ्यास क्रमशः बढ़ाकर एक घन्टे तक ले जाओ।

दाँतों के रोग दूर करने और शरीर पुष्ट करने के लिये।

ग्यारहवाँ प्राणायाम

(१) बायाँ पैर दाहिनी जंघा और दाहिना पैर बाईं जंघा पर रक्खो और दाहिने हाथ से दाहिना पैर बायें हाथ से बायाँ पैर के अंगूठे को पकड़ो।

(२) पूरक मुँह से इसप्रकार करो कि दोनों दाँतों की पंक्तियाँ भी श्वास लेने में सहायक हों और "सी सी" की सी आवाज के सदृश ध्वनि होने लगे।

(३) कुम्भक करके दोनों नथुनों से धीरे २ रेचक कर दो।

(४) ४५ मिनट तक अभ्यास बढ़ाते हुए लेजाना चाहिये।

शरीर में गर्मी बढ़ाने के लिये

बारहवाँ प्राणायाम

(१) सिद्धासन से बैठकर दोनों नथुनों से प्रथम पूरक धीरे २ करके रेचक करो।

(२) पुनः पूरक उस (पहले) से कुछ तेजी से करो और फिर रेचक।

(३) इसी प्रकार पूरक का क्रम या वेग बढ़ाते जाओ, जिससे श्वास लुहार की धौंकनी की तरह चलने लगे।

(४) पसीना आने पर अभ्यास बन्द कर दो *।

जिह्वा, तालु, नाक, कान और हलक को निरोग रखने के लिये

तेरहवाँ प्राणायाम

(१) पद्मासन से शांतिपूर्वक बैठ जाना।

(२) जिह्वा की नोक तालू से लगाओ फिर उनकी सहायता से मुँह से पूरक करलो।

(३) समस्त शरीर को ढीला करके पूरक करो।

(४) नाक से रेचक करो।

(५) अभ्यास बढ़ाकर ४५ मिनट तक ले जाओ।

---

* नोट—इस प्राणायाम के निरन्तर अभ्यास से शरीर के जोड़ों और पिंडलियों का दर्द भी जाता रहता है। अभ्यास बढ़ाकर एक घंटे तक ले जाओ।

ब्रह्मचर्यसाधक

चौदहवाँ प्राणायाम

(१) चित लेट जाओ और कानों को मोम से बंद करलो जिससे बाहर का कोई शब्द न सुनाई दे और नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमाओ।

(२) आधे घंटे तक इसी स्थिति में रहो। रुक रुक कर गहरी श्वास लो।

(३) फिर आँखों की पुतलियों को ऊपर चढ़ाओ और भ्रुवों के मध्यभाग में दृष्टि जमाओ। ऐसा करने से आँखें बंद होने लगेंगी। उन्हें बंद होने दो *।

वीर्यस्तम्भक

पन्द्रहवाँ प्राणायाम

(१) बायें पैर की एँड़ी मलेन्द्रिय के नीचे रक्खो और दाहिना पाँव बायें पैर की जंघा पर रक्खो।

(२) नाभि में धारणा करके नासिका के किसी एक छिद्र से पूरक करो।

(३) फिर कुम्भक के दूसरे छिद्र से रेचक करो।

(४) इस प्रकार चौदह अभ्यास करो।

(५) यह ध्यान रखना चाहिये कि नाक के जिस २ छिद्र से पूरक रेचक किया जाय या किया था एक समय के

---

* नोट—संख्या दो की स्थिति में अधिक रहने से भीतर के शब्द भी सुनाई देते हैं जिन्हें कबीर आदि महापुरुषों ने अनहद शब्द कहा है।

अभ्यास में बराबर उसी छिद्र से पूरक और रेचक करना चाहिये।

प्राणायाम के अभ्यासी को सात्त्विकी और हल्का भोजन करना चाहिये। जितनी भूख हो उससे दो ग्रास कम खाना चाहिये। वरना आलस्य योग की क्रियाओं को धक्का पहुँचाता है, और अनेक विघ्न बाधाएँ होने की सम्भावनाएँ हैं *।

प्राणायाम से विचारों का विकास होता है। विचार स्फुरित होने से मन की शंकाएँ निवृत्त होती हैं। शंकाएँ हल होजाने पर ईश्वर पर दृढ़ विश्वास होता जाता है। ईश्वर पर विश्वास होने से घोर आपत्ति आनेपर भी धैर्यता बनी रहती है। मनकी स्थिरता होने से कार्य साधन-शक्तिउत्पन्न होती है। बल तो सदा ही बना रहता है और किसी प्रकार की बीमारी आने की शंका ही नहीं रहती है।

प्राणायाम से रक्त शुद्ध होता है, रक्त की शुद्धता से शरीर हृष्टपुष्ट बना रहता है। शरीर पुष्ट होने से दयालुता आती है। दया का आविर्भाव होने से हिंसक प्राणी भी योगी के दुःख का कारण नहीं हो सकते हैं।

प्राणायाम से राजयक्ष्मा (तपेदिक़) हृदय की निर्बलता

---

* नोट—प्राणायाम आरम्भ करते समय सबसे प्रथम यम और नियम का पालन करना चाहिये।

नोट—प्राणायाम की प्रत्येक क्रिया करते समय प्रबल इच्छा मन में यह रहनी चाहिये कि वीर्य की ऊर्ध्वगति हो रही है।

नोट—गृहस्थ पुरुष भी स्त्री के गर्भवती होने पर इस प्राणायाम का अभ्यास करके लाभ उठा सकते हैं।

श्वास, कास, कण्डू, खाज, बार २ सर्दी जुखाम का लगना, पेट का बढ़ जाना इत्यादि रोग निश्शङ्क चले जाते हैं।

अभागे भारत ने जब से सन्ध्या के साथ प्राणायाम करना छोड़ दिया है, तभी से अनेक बीमारियों का घर बना हुआ है। क्योंकि राजा जब किसी मनुष्य को किसी अपराध में नीतिविरुद्ध कार्य करने पर राजदण्ड से कारावास मिलता, तो बहुत ही लज्जा शर्म मानी जाती है, लेकिन आज सारा भारत जो कि अपने पूजनीय ऋषियों के नियम को उल्लंघन करके जो यातना भोग रहा है, क्या यह कम लज्जा की बात है ? रोगी बनना अपराध नहीं है ? चारपाई पर कराहें लेना, और भीतर ही पड़े रहना क्या यह ऋषियों की आज्ञा उल्लंघन करने की काल कोठरी नहीं है ? अवश्य है। इसलिये अपने पूर्वजों के नियम पर चलिये और सायं प्रातः सन्ध्या करते हुए प्राणायाम के अभ्यास को बढ़ाइए और अपने बालबच्चों को प्राणायाम सिखलाइए।

———

ॐ

सूर्य चक्रबंध

अर्थात् आत्मशक्ति प्रकाश

**अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादा पानती
व्यख्यन्महिषो दिवम्** ऋ० १०-१८६

मेरुदण्ड मस्तिष्क, सुषुम्णा, पिंगला में ऐसे असंख्य चेतना चक्र होते हैं। ऊपर लिखित उनमें मणि पूरक चक्र ही सूर्य चक्र है, इसलिये उसका कुछ विस्तृत वर्णन करना ही आवश्यक है। प्रथम मूलाधार चक्र है, द्वितीय स्वाधिष्ठान चक्र है, एवं मणि पूरकचक्र है। मेरुदण्ड के पीछे अस्थि चक्र इसका बाह्य छादन है। उसके अन्दर सुषुम्णा के भाग में के दश चेतना चक्र मानों इसके पद्म के समान दश दल हैं। इन दश दलों में से ब्रह्मरन्ध्र तक जानेवाली सुषुम्णा नाड़ी सूक्ष्म नालिका मानों इस पद्म का नाल है। एक चेतना चक्रों में से निकलनेवाले तन्तुओं के तथा उनके बाहर के भाग में रही हुई इड़ा पिंगला अर्थात् वाम दक्षिण स्वर वाहिनी नाड़ियों की ग्रन्थियों के जाल मानों इस पद्म के केसर हैं। इसप्रकार नाभि के पीछे सुषुम्णा विभाग में मेघ वर्ण दस दल का मणिपूरक चक्र है। उसके दलों में पूर्व दिशा से लगाकर यथानुक्रम सुषुप्ता (गाढ़निद्रा) तृष्णा, ईर्ष्या, पिशुनता (दोष प्रकटीकरण) लज्जा, भय, अनुकम्पा, मोह, कषाय (मलिनता), विषाद दस दलों में दस

भावों का उदय होता है। प्राणायाम से जीवात्मा जब प्राणारूढ़ होकर मणिपूरक पद्म के प्रत्येक दल में व्याप्त हो जाता है, तब उसे इन दस भावों का ज्ञान हो जाता है। यही सूर्यचक्र का भवन (स्थान) है। यहीं से ज्ञानतन्तुओं में से प्रकाश उत्पन्न होके उसके मस्तिष्क में केन्द्र बनता है। यहीं से समस्त नाड़ी चक्रों का विस्तार होता है। एवं यहीं से विद्युत् की उत्पत्ति होती है। इसी को मूलकेन्द्र कहते हैं। यहीं प्राण एवं अपान का सम्मिलन होके आक्सिजन कार्बोन बनकर शरीर का रक्त शुद्ध होता है। प्रश्नोपनिषद् में कहा है कि आत्मा का स्थान हृदय है वहाँ मुख्य एक सौ एक नाड़ियाँ हैं। उनमें एक २ नाड़ी के सौ २ भेद हैं, उन सौ नाड़ियों में से एक नाड़ी की बहत्तर हजार प्रति शाखा नाड़ी हैं अर्थात् कुल नाड़ियाँ ७२ करोड़ ७२ लाख १० हज़ार २०१ हैं। उन सब नाड़ियों में व्यान नामक वायु का संचार होता है। व्यान वायु को प्राण अन्दर लेता है। अन्दर के अपान वायु को बाहर फेंकता है। उसी प्रकार सारे शरीर में अर्थात् "व्यानम् सर्वशरीरम्" रह रक्ताभिसारण करता है। वह ज्ञान एवं गति के आघात का संज्ञापक है। भगवान् शंकराचार्य प्रश्नोपनिषद् के वाक्य में कहते हैं "सूर्य से निकलनेवाले किरण सब जगत् में प्रसार पाते हैं उसी प्रकार हृदय से निकलनेवाले सर्व शरीर में संचार करनेवाली नाड़ियों की सहायतासे यह व्यान वायु सब शरीर में संचार करता है" उसमें सन्धिगत मर्मस्थान में स्नायुओं का संकोच विकास कर लेने में तो विशेष जोर रहता है। जिससे ऊपर लिखे अनुसार प्रत्यावर्तन क्रिया में इसकी बड़ी सहायता होती है।

वैसे ही इस विभाग के आरम्भ में उल्लिखित वेद मंत्र के अनुसार प्राण और अपान का अभाव होने पर व्यान की वृत्ति का उदय होता है। यह व्यान वायु प्राणापान के अभाव में अर्थात् मध्यकाल में श्वास लेकर प्रश्वास नहीं आने पाता इन दो काल में बड़ा जोरदार होकर अद्भुत कार्य संपादन कर सकता है। अगर वह स्थिर होजाय— "अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे, प्राणापानं तथा रुद्ध्वा प्राणायामपरायणः"। कोई अपान में प्राण का होम करते हैं एवं प्राण और अपान की गति रुद्ध करके कितने प्राणायाम ही में लीन होते हैं। अर्थात् मूलकेंद्र सूर्यचक्र मणिपूरक चक्र में अपान "कारबौन" अशुद्ध प्राण वायु होता है। उसमें शुद्ध प्राणवायु को मिला देना प्राण में अपान का होम करना है। इसीको प्राणायाम अर्थात् प्राण का अवरोध कहते हैं, एवं इसी अवरोध से "अपरे नियताहाराः प्राणान् प्राणेषु जुह्वति" हितभुक्, मितभुक् अशाकभुक् होकर प्राणों का प्राण में होम करते हैं। अर्थात्, "आदित्या हे वै बाह्य प्राण उदापत्येष हेनंचाक्षुषं प्राणमनुग्रहाणां" सूर्य यह बाह्य प्राण है जो नेत्रस्थित प्राण को ग्रहण करके उसका उदय करता है। सूर्य उदय ही से बाह्य प्राण का उदय होके नेत्रों द्वारा अन्तः प्राण का उदय होता है। क्योंकि नेत्रों में रूपग्रहणशक्ति सूर्य द्वारा ही उत्पन्न होती है। ऐसा यह शुद्ध प्राण उदान का रूप है "तेजोऽहवा उदानम्" जो बाह्य प्रसिद्ध तेज है वह शरीर में उदान है अर्थात् वह अपने प्रकाश से उदान वायु का अनुग्राहक, उपकारक होता है। अशुद्ध वायु अपान का लय होकर शुद्ध प्राण में शुद्ध आक्सिजन का सम्मेलन होता है, यही

प्राणों में प्राण का होम है। जो नियताहार से ही स्थित रहता है। एवं उसीसे सूर्य चक्र का वेध होकर प्राण शक्ति बढ़ती है।

यह प्राप्त शक्ति स्वयं प्रकाश उत्क्रान्ति कारक है, बाह्य-तेज सूर्य के प्रकाश किरणों के सिवाय उदान शरीर में नहीं रह सकता, एवं प्राण का होम होके प्राण में प्राण का लय भी नहीं हो सकता। अर्थात् बाह्य जगत् प्रकाशक सूर्य किरणों द्वारा बना हुआ शुद्ध प्राण वायु पूरक होके मणि-पूर चक्र में पहुँच कर उसको आवृत करनेवाले अशुद्ध अपान वायु का रेचक करके वहां कुम्भक बनता है। जिससे मणिपूर चक्र पूर्ण विकाश होकर वह मध्य आकाश के सूर्य समान मध्य शरीर में, हृदयाकाश में प्रकाशमान होता है।

इस अन्तर बाह्य प्राणशक्ति प्रसारक जीवन शक्तिदायक एवं प्राणपोषक भगवान् सूर्य के लिये ऋग्वेद में जगह २ इतना प्रमाणसिद्ध लिखा गया है कि चाहे जिस धर्म का, चाहे जिस मत का, चाहे जिस देश का कोई भी आस्तिक नास्तिक होकर कभी खण्डन नहीं कर सकता। देखिए जीवन या चेतना लानेवाला सूर्य है। वह स्थिर चर जगत् का जीव और प्राण है। वह विश्वकर्मा अर्थात् सब पदार्थों का कर्ता, सबको एकत्र करनेवाला एवं प्रजापति अर्थात् मनुष्यादि सब जन्तुओं का स्वामी है। एक उद्गाता कहलाता है कि सविता ने पृथ्वी को रस्सी से बाँध रक्खा है। उसने पीला कवच एवं पीले वस्त्र परिधान किए हुए हैं, और सुवर्ण केश धारण किए हुए हैं सचमुच अन्तर बाह्य जगत् में प्रकाशक सहस्ररश्मि भगवान् सविता का यह वर्णन यथार्थ एवं अन्वर्थ है।

ऋग्वेद में कहा है कि—१०—८५—१६

द्वे ते चक्रे सूर्य ब्रह्मण ऋतुथा विदुः अथैकं चक्रे यद्गुहा तदद्धा तव इवि ददुः ।

अर्थात् सूर्य के दो चक्र हैं एक स्थूल चक्र एवं दूसरा गूढ़ चक्र । सततः मननशील ध्यानपरायण सूर्य के गूढ़ गुप्त चक्र को जान सकता है अन्य नहीं । वैसेही ६-९-५ में कहा है कि " ध्रुवं ज्योति निहितं दृशमेके मनोजविष्टं पतयत्स्वन्तः । विश्वेदेवा समनसः सकेता एकं ऋतुमभि-वियन्ति साधु " । जबतक प्राणिवर्ग के हृदय में ज्योति-किरण प्रविष्ट रहते हैं तबतक सब इन्द्रियां इस नित्य ज्योति के समीप से ही शब्द स्पर्शादि विविध विज्ञान प्राप्त करता है । एवं सब इन्द्रियां इस नित्य ज्योति को एक साथ क्रिया की अनुवर्ति रहती हैं । अर्थात् शरीर के प्रत्येक अवयव तथा स्नायु में जीवनशक्ति पहुँचाने का काम मस्तिष्क करता है । जैसे टेलीफ़ोन एक्सचेंज शहर में जुदी २ जगह बातचीत करने के लिये संबंध कर देता है वैसेही मस्तिष्क शरीर में क्रिया करता है, एवं वह क्रिया इतनी सूक्ष्म वेगवती और बलवती होती है कि जिसका ज्ञान विना अभ्यास के नहीं हो सकता है ।

अभ्यास क्या है अनुकंपा के प्रेरक एवं जीवनशक्ति प्रदा-यक मणिपूरक चक्र को जानना है । यह सूर्य चक्रज्ञान तंतुओं से गुथा हुआ जाली समान एक गुच्छ गेंद है । जो मनुष्य शरीर नाभि और पृष्ठ वंश के मध्य में होता है जिसे जठर का मस्तिष्क कहते हैं । इस पर से ज्ञात होगा कि सूर्य चक्र

क्या है उसका संबंध मुख्य शरीर से क्या है। एक उसका मनुष्य के मनोविकारों के साथ क्या संबन्ध है ? वह वाणी के नाभिस्थानों तारों की गुच्छली के समान नाभिप्रदेश में रहनेवाला शरीर का मूलकेन्द्र है। यहीं से परावाणी का उदय होता है। यहीं से कुण्डलिनी का ज्ञान होता है, यहीं से सूर्य चन्द्रादि नाड़ियों का आविर्भाव होता है। एवं यहीं से प्राणवायु की सुषुम्णा में गति होती है। मनुष्य की यह जीवनकल है। मस्तिष्क के केन्द्र में अनाविशुद्धी आज्ञा चक्रों को भेद कर सहस्रार चक्र में ज्ञान सन्देश यह जीती जागती विद्युत् बेटरी है। यहां से विद्युत्कण उत्पन्न होके मस्तिष्क से लगाकर पैर तक सारे शरीर में प्रकाश फैलाते हैं। इस सूर्य चक्र को जानकर ॐ का जप इसका वेध करने पर अभ्यास द्वारा इस पर सत्ता प्राप्त होती है चित्त की शक्तियां प्रचुर संचय होके मनुष्य कर्तुमकर्तु मन्यथाकर्तुम् शक्तिशाली होता है। समूल तत्त्व का मुख्य कारण यही है कि जिस प्रकार सूर्य से प्रकाश निकल कर जहाँ २ उसका स्पर्श होता है वहाँ २ नवजीवन का संचार होके उसकी उन्नति होती है। उसीप्रकार मणिपूर चक्र यथार्थ क्रिया करता है। तब शरीर सब ज्ञान तन्तुओं के व्यूह में एवं बाहर सर्वतः आन्दोलन क्रिया होती है अर्थात् तत्त्वबल प्रसार होता है। जिससे शरीर तथा जीवन आकर्षण तथा विकर्षण क्रिया द्वारा सर्वत्र विजय प्राप्त होता है।

ऊपर के विवेचन से स्पष्ट ज्ञात होजायगा कि हमारे इस विषय का जहाँ-तहाँ भलीभाँति ऊहापोह किया गया है। हमारे पूर्वजों ने हजारों वर्ष पहले उसका अनुभव

लेकर वर्णन किया है। किन्तु कालचक्रवश सबके साथ अब उस चक्र का हमें परिचय रहा नहीं। अर्थात् हम अपने कुल परम्परागत कर्तव्यों से विमुख होगये। एवं ज्ञानवंचित होके सब भूल गए। और तो और रहा संध्या एवं गायत्री क्या चीज़ है या किस चिड़िया का नाम है, वह इस वक्त कौन जानता है? जो हमारा प्रधान कर्तव्य है एवं जिस पर हमारे वर्णाश्रमधर्म का संगठन है। वही संध्या बाह्य सूर्यसन्धि प्रकाश द्वारा अन्तरीय सूर्यचक्र को प्रकाशित करनेवाली एक धार्मिक क्रिया है एवं गायत्री मंत्र इसी सूर्यचक्र का वेध करके उसका प्रकाश फैलाने-वाला एक अमोघ अस्त्र है। किन्तु वह कालचक्र ने उसको भी नाम शेष कर दिया। इस समय तो हमारे निकृष्ट जाति के पतित संथाल लोग भी हमसे अच्छे हैं। जो कि अपने बाह्य एवं आन्तरिक सूर्यचक्र को भूले नहीं। यह "मोक्षमूलर" अपने एक हिवर्ट लेक्चर में कहते हैं कि आर्यावत में संथाल नामक बहुत निकृष्ट जाति के जंगली लोग हैं। ये सूर्यपूजक हैं। ये सूर्य को 'चन्दो' अर्थात् दीप्तिमान् कहते हैं। उनकी भाषा में यह शब्द चन्द्र का भी वाचक है। इन संथाल लोगों के साथ कुछ मिशनरी लोगों का समागम हुआ। उनको वहाँ के लोगों ने कहा कि यह जगत् चन्दो ने बनाई है। मिशनरी लोग उन्हें समझाने लगे कि 'चन्दो' ने जगत् उत्पन्न किया यह तुम्हारा कहना बिलकुल ग़लत है। तब उन संथाल लोगों ने प्रत्युत्तर किया कि साहब! जिस चन्दो के लिये आप कहते हैं वह हमारा चन्दो दृश्य नहीं है। वह हमारा चन्दो अदृश्य है। अस्तु जैनियों का सामयिक बौद्धों की

शून्य भावना का, एवं इस्लामियों की नमाज़ का, और ईसाइयों की प्रार्थना का यही हाल है। यह सब कालचक्र का प्रभाव है।

संध्या क्या है, आरम्भ के मंत्र में कहा हुआ संधिप्रकाश एवं प्राणोपान का संधिचक्र संध्या है। बाह्य सूर्य को संध्याकाल में जैसे प्रत्यक्ष पौराणिक अर्घ्य अंजली प्रदान करते हैं उसी प्रकार अन्तर्यः सूर्य की चक्र की संध्या करनी होती है।

बाह्य संध्या समय के उदयास्त से तीन घड़ी तक करनी चाहिये, इससे अधिक काल में संध्या करने से प्रायश्चित्त करना पड़ता है। थोड़े समय के बीत जाने से सूर्यदेव को एक अर्घ्य अधिक देना पड़ता है, और अधिक काल बीत जाने से १०८ गायत्री मंत्र अधिक, और संध्या से प्रथम जाप करना पड़ता है। फिर संध्या का करना होता है। भगवान् याज्ञवल्क्य ने कहा है।

यावन्तोऽस्यां पृथिव्यां हि विकर्मीस्थास्तु वै द्विजाः।
तेषां वै पावनार्थाय संध्या सृष्टा स्वयंभुवा ॥
निशायां वा दिवा वापि यज्ज्ञानं कृतं भवेत्।
द्विकालसंध्याकरणं तत्सर्वं हि प्रणश्यति ॥

इस पृथ्वी में जितने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य द्विज जन दुराचारी हैं, उन्हीं को पावन पवित्र करने के लिये स्वयं ब्रह्मा ने संध्याविधि को बनाई है। रात्रि या दिवस में अज्ञानवश जो दुराचार होते हैं, वह ठीक दोनों समय

करने से उसका पाप नाश होता है। अर्थात् द्विज बुरे आचरणों के पाप से नाश को प्राप्त होते हैं।

तस्मान्नित्यं प्रकर्त्तव्यं सन्ध्योपासनमुत्तमम्।
तदभावेऽन्य कर्मादावधिकारी भवेन्नही॥

इसलिये सन्ध्योपासन उत्तम कर्म नित्य करना चाहिए बिना इसके किए द्विज, दूसरे कर्म का अधिकारी नहीं होता।

सन्ध्योपासन में मुख्य गायत्री मंत्र है, उसमें ओंकार पितृस्वरूप है "गायत्री वेदजननी गायत्री लोकपावनी" "न गायत्र्यां परे जाप्यमेतद्विज्ञानमुच्यते"। गायत्री वेद की जननी है, गायत्री लोकपावनी है। गायत्री के समान कोई जप नहीं, उसमें ज्ञान विज्ञान भरा हुआ है। ऐसा मार्कण्डेय ऋषि का कहना है। गायत्री मंत्र क्या है? उसी प्रकाशपुञ्ज परब्रह्म परमात्मा की उपासना है।

"तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्"

गायत्री मंत्र के तत्, सवितुः, वरेण्यं, भर्गः, देवस्य, धीमहि, धियः, यः, नः, प्रचोदयात् ये दश पद हैं। इसके अर्थ निम्न प्रकार के हैं।

तत्—जो वाणी और मन से जाना जाता नहीं एवं सूर्य-मण्डल में जिसका ध्यान होता है।

सवितुः—उस सबकी उत्पत्ति, स्थिति और संहार करनेवाला।

वरेण्यं—जो सबका आश्रयभूत है, और यह जगत् जिसका आधार है।

भर्गः—जो अपने साक्षात्कार से अविद्या का दहन करता है।

देवस्य—सर्वत्र प्रकाश पानेवाले और आनन्द से क्रीड़ा करनेवाले को।

धीमहि—मैं वही हूं, अर्थात् यह अभेद सिद्ध करने के लिये उसका ध्यान करता हूँ।

धियः—अन्तर्निगूढ़ प्रणव ॐ का प्रचार करनेवाले अन्तःकरण की वृत्तियों को।

यः—सत्यज्ञानादि लक्षण अलिंग धर्म अर्थात् परब्रह्म ॐ।

नः—बहुधा भिन्न सूर्य भरे दृष्टि का अभ्यास करनेवाले हमको।

प्रचोदयात्—प्रेरणा करो।

इस प्रार्थना का विचार दिया जाता है। इसमें पाठकों को ज्ञान हो जायगा कि हमारे यहाँ किस प्रकार कितनी गम्भीर भावना से परमात्मा का ध्यान किया गया है। मेरे ही उपासना से यह सूर्य्य प्रकाशित होता है और सूर्य्य ही हमारा प्राण है। आदि २ भावनाएँ प्रगाढ़ दृढ़कर सूर्यलक्ष्य में उपासना करके भावना द्वारा मनुष्य सूर्य्य में होके सूर्य्य-रूप हो जाता है।

देखिए हमारे पूज्यपाद ऋषि मुनियों की ॐ भगवान् के लिये कितनी उच्च पवित्र एवं सत्य भावनाएँ थीं। ईशावास्योपनिषद् में कहा है कि—

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये॥

हे भगवन् ! सुवर्ण के समान प्रकाशमान ऐसे आच्छादन भूत पात्र से, अर्थात् अपने तेजोमय बिन्दु से सूर्य-मंडल में रहनेवाले (परमसत्य) के मुख को तुमने ढक रक्खा है। उस मुख को मेरे लिये खोल दो। मैं सत्यधर्मा हूँ। अर्थात् मैं सत्यस्वरूप का उपासक हूँ। वह मुख्य सत्य-स्वरूप अनावृत करके मुझे अपना रूप दिखा दो। या सत्य धर्म आचरण करनेवाले मुझे तुम्हारी सत्यस्वरूप की प्राप्ति के लिये उस मुख को खोल दो। अर्थात् भगवन् सूर्य! तुम चन्द्ररूप बनकर "परम सत्य की प्राप्ति कर दो"।

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य्य प्राजापत्य व्यूह-रश्मिन् समूह।
तेजो यत्ते रूपं कल्याणं तमं तत्ते।
पश्यामि योसावसौ पुरुषः सोहमस्मि ॥

हे जगत् के पोषक, जगवृद्धिकारक, भगवन् ! जगत् को प्रकाश देने के लिए अकेले फिरनेवाले ऋषे ! हे ज्ञान-मय ! सबका नियमन करनेवाले यमस्वरूप ! सबको प्राणों के एवं रसों के आकर्षण करनेवाले प्रभु ! अपने तेज रूप प्रकाश द्वारा तप्त करनेवाले तेज का उपसंहार कर दो। जिससे तुम्हारे दृश्यस्वरूप के आगे रहे हुए परम सत्य को मैं देख सकूं। अथवा सद्वस्तु के अनुग्रह से तुम्हारे सत्य, सुन्दर एवं मंगलस्वरूप का मुझे दर्शन होगा है। मंगलमय ! यहाँ मैं भृत्य के समान तुम्हारी याचना नहीं करता हूँ, तुम्हारा स्वरूप देखने के लिये मुझे पूर्ण अधिकार है, क्योंकि सूर्यमंडल में रहनेवाला और भूमि जिसका सिर है,

अन्तरात्मा जिसके हस्त हैं, स्वर्ग जिसके पैर हैं, ऐसे "भूर्भुवः स्वः" रूप को धारण करनेवाला मैं ॐ का दासानुदास हूँ। यों कहिए कि मैं ॐ प्रकाश का साथी हो चुका हूँ। अथवा प्राणबुद्धि के योग से बना जगद्रूप मैं हूँ अथवा देह पूर्ण से वाला पुरुष मैं हूँ, अर्थात् तुम्हारे मंगलमय परम सत्य के दर्शन के लिये मैं सर्वथा योग्य हूँ। हे भगवन् पूषन्! मुझे अपना दर्शन दो।

आ हा हा कितनी सुन्दर भावना, कितनी सुन्दर कल्पना, एवं कितनी सुन्दर सत्य उपासना है! आजकल इन बातों का हमें स्वप्न में भी कभी स्मरण नहीं होता, कैसी उस भगवत् की अघटित वृत्ति है, और वक्र दृष्टि है? क्या हम लोग कभी अपनी विद्या का अनुभव लेके अपने गौरवास्पद भारत का उद्धार करेंगे?

मस्तिष्क विचारस्फुरण होता है, उसी के अनुसार सूर्य-चक्र के मणिपूरचक्र का संकोच विकाश होता है। इस लिये भगवान् पतञ्जलि ने यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि, अष्टाङ्ग योग का प्रतिपादन किया है। यम नियमों से विचार की शुद्धि होती है। प्राणायाम से नाड़ियों की शुद्धि होती है। धारणा ध्यान समाधि से चित्त की शुद्धि होती है। इसका विवेचन विचारदर्शन में है। जैसी २ देह मन इन्द्रियों की शुद्धि होती जायगी, वैसे २ स्फुरित विचार होते जायँगे।

बैठते, उठते, हिरते, फिरते, खाते, पीते, सोते, जागते, बोलते, चालते, काम करते कराते, अपने में, अपना लक्ष्य करके अलक्ष्य का लक्ष्य करना चाहिये। उसका लक्ष्य करने के लिये चश्मे की ज़रूरत नहीं, खुर्दबीन की आव-

श्यकता नहीं, केवल बाहर लक्ष्य और अन्दर लक्ष्य होना चाहिये। अन्दर लक्ष्य क्या है, प्रथम प्रकाश मे कहे अनुसार "पारास्फुरण पश्यन्ति" मध्यमा और वैखरी के अर्थ और शब्द की एकता करता है या नहीं इसका निरीक्षण करना है इसी को शाम्भवी महामुद्रा कहते हैं। अन्दर के श्वास प्रश्वास की चाल पर लक्ष्य करना चाहिये। बाहरी दृष्टि को निमिषोन्मेषरहित करना चाहिये अर्थात् श्वास बाहर से अन्दर जानेवाला वायु किस तरह अन्दर आता है और बाहर निकलता है। केवल उस पर लक्ष्य रखना ही पर्याप्त है। वैसे ही आँखों की पलकें थाम २ कर गिरानी चाहिये।

बस यही लक्ष्य वैध है। यही शाम्भवी स्वयंभूत कल्याणकारिणी मुद्रा अर्थात् सिक्का, छाप, चिह्न, लक्ष्य वैध है और इसीसे जन्म मृत्यु का नाश होता है। इसी को लक्ष्य वैध कहते हैं।

अनुभवी सूर्यलक्ष्य प्रथम विधि

ऊपर का लेख सूर्य चक्रबंध भले प्रकार पाठकों के समझ में आगया होगा कि किसप्रकार योगी अपनी आत्मा को समुन्नत कर सकता है। कठिनता क्या है, जब तक किसी भी कार्य करने के लिये खड़े न हुए, तबहीं तक मन की तरंगें मनुष्य को भयावह मालूम देती हैं। जब कार्य को हाथ में ले लिया, तब विकल्पता हाथ जोड़े अन्तिम नमस्ते कर देती है। जिस मनुष्य ने मन को क़ाबू में करके, यह विचार पुख़्ता कर लिया हो कि मैं इस मानव शरीर में कुछ करने के लिये आया हूँ, वह निश्चय ही कुछ न कुछ करता ही

रहता है। अगर आपने अपनी आत्मा को इस तरफ़ झुकने दिया तो निश्चय है कि आप कुछ न कुछ करही लेंगे, क्योंकि ईश्वरविश्वासी को कोई कार्य कठिन नहीं। समय कुछ भी व्यय न हो और एक पन्थ दो काजवाली बात ठीक निकले। संध्यावन्दनादि में आप कुछ समय अवश्य लगाते होंगे। बस हो लिया। इसी में आप अपनी आत्मा की एकता को समुन्नत कर सकते हैं।

अब सहल तरीक़ा योगियों के लिये इस प्रकार है कि जिस समय आप संध्यावन्दनादि में बैठते हैं, उसी समय आप एकान्त अँधेरी कोठरी में, जहाँ पर किसी प्रकार का उजाला और हल्ला गुल्ला न हो शुद्धासन से बैठ कर, जब योगी गायत्री मंत्र का जाप करने लगे तो, एक काला या लाल कपड़े का डेढ़ गज़ लम्बा मुँह के ऊपर ढांक दे। और बायें हाथ की उँगुलियों से नेत्रों को बंद किए रहे और दहिने हाथ की उँगुलियों से गायत्री जप की गिनती करता रहे। गिनने से अभिप्राय समय का निश्चित करना है। आप जितना भी समय लगा सकते हैं लगाने का निश्चय कर लें। अब योगी ने बायें हाथ से नेत्रों को बंद किया है, मानसिक दृष्टि से कपड़े पर देखने का प्रयत्न कीजिये : अर्थात् नेत्र बंद किये रहने पर अन्धकार को देखना है। देखते २ योगी को दस बारह दिन में ही बादल के टुकड़े दिखलाई देगें, और तत्क्षण ही विलीन हो जायँगे। कुछ अभ्यास के करने से ही यह किञ्चित् छोटे २ कण अग्नि के जैसे दिखलाई देंगे, लेकिन कुछ ही क्षण ठहर कर विलीन हो जायँगे। इस प्रकार कुछ दिन और अभ्यास से वह आग के रंगे बिरंगे कण

कुछ २ स्थायी होते जायँगे। दो ढाई महीने बराबर नित्य अभ्यास करने से एक प्रकार का प्रकाशपुञ्ज दिव्य प्रातः-काल का ऐसा सूर्य दिखाई देगा, और आपके नेत्रों को सहन न हो सकेगा और आप उँगुलियों को नेत्रों से हटा देंगे। अभ्यास करते रहिए।

दूसरी विधि

रात्रि को सोते समय न पेट भरा हो न भूक ही हो, एक अँधेरी कोठरी में जहाँ एकान्त हो, जहाँ मनको विच-लित करने का कारण न हो शुद्धासन से बैठ जाओ। एक कपड़े का टुकड़ा प्रथम अभ्यास में लिखे अनुसार, और उसी प्रकार नेत्रों को बंद कर कपड़े को देखने का प्रयत्न करो। चित्त खिन्न हो जाने पर कुछ मिनटों के लिये विश्राम ले लो। एक घंटे में २-३ दफ़े विश्राम ले सकते हो। पूर्वोक्त प्रकार से आपको दृश्य दिखलाई देंगे।

अनुष्ठान पर से उठने पर दूध पीकर सो जाइये, यत्र तत्र गप्प शप्प में मत जाइये, क्योंकि आपका मन एकाग्रता धारण किए हुए है। व्यर्थ मन को चंचल मत बनाइये। अभ्यास जहाँ तक बढ़ा सको किए जाओ। आत्मोन्नति होती जायगी।

तीसरी विधि

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते। गी०

केवल एक समय संकल्प मात्र को स्थायी कीजिये, फिर सब सिद्धियाँ आपके सामने हाथ बाँधे खड़ी हैं।

प्रातोदय का सूर्य भगवान्, अपनी प्रखर किरणों को

अपने तेजःपुञ्ज में विलीन सा किए हुए हल्की सी एक लालाम्बर ओढ़कर, योगीजनों के उद्विग्न एवं उत्कृष्ट संतप्त हृदय को आश्वासन देता हुआ कि सकल ब्रह्माण्ड का उत्पोषक अन्धकारविनाशक और जाज्वल्यमान प्रखर किरणें तब तक अपने लालाम्बर के भीतर छुपाए रखूँगा, जब तक अरुणोदय से जागृत योगीजन, "तत्सवितुवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्" का जाप करते २ थकित सी होकर, एकमात्र "यम सूर्य प्राजापत्य व्यूहरश्मिन् समूह" का दर्शनाभिलाषी साधु जन मेरे अर्द्ध तेजःपुञ्ज का दर्शन न कर लेंगे और तबतक अपने प्रखर किरणों को पृथ्वी तल पर प्रेषित न करूँगा, जबतक वह योगी जन समस्त घोर रात्रि से उद्विग्न हृदय एकमात्र अपने नेत्रों में अतुल तेजो राशि सूर्य भगवान् का आकर्षण अपने नेत्रज्योति में सञ्चारित न कर लेंगे। इस प्रकार योगीजन अपने स्वात्माराम को पुलकित करते हुए अपनी आत्मशक्ति को प्रकाशपुञ्ज में यत्किञ्चित् अभ्यास में संलग्न होकर तीन लोक का ज्ञाता हो जाता है। अर्थात् प्रथमारम्भ का सूर्य भगवान् बाल, वृद्ध, तरुण, प्रौढ़, स्त्री पुरुष सभी अवस्था के मनुष्य निर्विघ्नतापूर्वक देख सकते हैं। किसी प्रकार की नेत्रग्लानि न सहते हुए पूर्ण अर्द्ध दिवस तक एकमात्र नेत्र पलक न झपकते हुए सूर्यप्रतिबिम्ब पर धारणा, ध्यान, समाधिस्थ होकर पूर्ण योगेश्वर बन सकते हैं। कमी केवल तबतक है जबतक सच्चे हृदय से "तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु" का स्वागत न किया जाय। जब विचार कर लिया तब व्यभिचार में मत फँसो, जब संकल्प कर लिया तब विकल्प में मत धँसो।

भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात्

पा. यो॰ शास्त्र विभूतिपाद

देखो ऋषियों के लिखने की शैली, गागर में सागर को भर दिया। तुम यक़ीन लाओ अथवा न लाओ यहाँ तो महान् योगेश्वर व्यासजी इतना दूर तक इस सूत्र पर अपनी टिप्पणी चढ़ाते हुए लिख गए कि सारे ब्रह्माण्ड का नक़शा योगी के नेत्रों में दिखलाई देने लगता है। महर्षि व्यास इस सूत्र पर इतनी महिमा वर्णन करते हैं कि योगी अभ्यास करके ही कुछ न कुछ अनुभव में ला सकता है।

प्रातःकाल शौचादि से निवृत्त होकर अगर सन्ध्यावन्दनादि से प्रथम ही निवृत्त हो लें तो अच्छा है, वरना स्नानादि से निवृत्त होकर सूर्योदय से प्रथम ही एकान्तस्थान पर जाकर जहाँ किसी प्रकार योगी की संयमशक्ति को विचलित करने का कारण न हो, शुद्धासन से बैठकर, गायत्री का जाप करता हुआ एकमात्र दृष्टि पूर्व की ओर लगी हो। आपके देखते २ मन्द मुसकान के साथ भुवन-भास्कर योगी की ओर निहार कर कुछ ही समय पश्चात् इतना प्रचण्ड रूप धारण करते हैं कि केवल एकमात्र योगी ही उस तेजःपुञ्ज का मुक़ाबिला कर सकता है।

योगारम्भ समय योगी केवल पाँच मिनट तक ही सूर्य पर लक्ष्य कर दूसरे दिन ७ मिनट, इसी प्रकार अभ्यास को बढ़ाता जाय कि एक घंटा तक एक टक भास्कर के अर्पित हो जाओ।

प्रथमावस्था में अवश्य आँसुओं की धारा बहेगी लेकिन ४-५ दिन में ही आँसू निकलना बंद हो जायगा और शनैः २

योगी की आँखें भी सूर्यलक्ष्य पर समर्थ हो सकेंगी। प्रथमावस्था में परतन्त्रता होने की आवश्यकता नहीं। धीरे २ अपने अभ्यास को बढ़ा लो, आँखों में आँसू आते हों तो पोंछ डालो फिर अपनी वृत्ति सूर्य पर लगाओ दस दिन में ही आपके नेत्रों में स्थिरता आ जायगी और विना कोई कष्ट के सूर्यलक्ष्य कर सकोगे।

बीस दिन बाद अगर प्राणायाम के अभ्यासी भी हों तो सन्ध्यावन्दनादि और सूर्य त्राटक योग से निवृत्त होकर, अगर हो सके तो एकान्त कमरे में पाँच दस मिनट के लिये विश्राम कर सकते हैं तो करें, तब आप देखेंगे कि दो चार पलाओं के लिये अर्द्ध सुषुप्तावस्था आ जाने लगेगी। अर्थात् शरीर को चैतन्यता होते हुए भी संकेतमात्र स्वप्न हो जाया करेंगे। जिसे आगे विस्तारपूर्वक लिखा है।

अगर अब आपने व्रत के ४०–५० दिन व्यतीत कर लिये तो अब आपकी आत्मा समुन्नत होती जा रही है। आप गृहस्थ रहते हुए भी योगी हैं। अब आपके आत्मा में शक्ति का संचार होने लगा है। अभ्यास को छोड़ो मत, बन सके तो आजन्म के लिये स्थायी कर लो तब ही महान् से महान् सिद्धियाँ उपलब्ध होंगी।

सूर्य चक्रबंध एक त्राटक योग है। मेस्मरेज़िम भी त्राटक योग है। मेस्मरेज़िम के विद्या जाननेवाले क्या नहीं दिखाया करते हैं। सूखे को हरा करना और हरे को सूखा करना मेस्मरेज़िम का बायें हाथ का खेल है। बीमारी से रोते हुए मनुष्य योगियों ने पल भर में हँसा दिए हैं। किसी क़िस्म की बीमारी हो मेस्मरेज़िमवाले बिला दवा दूर भगा देते हैं, खेल तमाशे दिखाना उनके बायें

हाथ का खेल है। लेकिन उनका त्राटक क्या है? केवल श्वेत काग़ज़ पर एक काले बिन्दु पर अपने नेत्रों को टकटकी लगाकर देखना पश्चात् दर्पण, चाँद आदि भी देखते हैं। इसी प्रकार अभ्यास से दुनिया को बड़े २ करिश्मे करके दिखलाते हैं और यश और धन दोनों उपार्जन करते हैं।

लेकिन सूर्य पर त्राटक करना आजकल के कलियुगी जीवों के लिये लोहे के चने हैं। आजकल के योगी सूर्य त्राटक का नाम लेते ही धोती में पेशाब कर देते हैं। लेकिन हम अपने पाठकों से एक बार हाथ जोड़ कर निवेदन करेंगे कि आप चाहे जिस आयु के हों, जिस कुल के हों जिस वर्ण के हों, आप अवश्य सूर्य पर अपनी नेत्रशक्ति, को विकसित कीजिये। प्रथम पाँच मिनट से आरम्भ कर ३०—४० दिन में एक घंटा तक लेते जाइये। अगर एक घंटा तक नहीं कर सकते हो तो आधा घंटा अवश्य इस अभ्यास को कीजिए। हिन्दू शास्त्र कोई ऐसा नहीं जो सूर्य भगवान् की स्तुति न गाता हो यहाँ तक प्रातः सायं संध्या समय सूर्य को अर्घ्य दिया जाता है। कर्मकांडी विद्वजन विना सूर्य के दर्शन किए भोजन नहीं करते हैं। तब अगर वही दर्शन कुछ अधिक समय तक किया जाय तो कितनी दिव्य शक्ति कितनी नेत्रों में आकर्षणशक्ति, कितनी दूरदर्शिनी शक्ति, कितनी व्यथाओं को दूर करने की शक्ति कितनी भूत भविष्यत् वर्तमान जानने की शक्ति संचारित न की जा सकेगी? योगी स्वयं करके देख लेवें।

मैंने त्राटक योग की सब ही त्राटक करके देख लिया मेस्मरेज़िम का अभ्यास भी मुझे अच्छे प्रकार है लेकिन

जब सभी त्राटक योगों का कुछ न कुछ अभ्यास किया तो इतनी शक्ति मुझे केवल सूर्य लक्ष्यवंध में मिली उतनी और किसी त्राटक में नहीं मिली।

सूर्य चक्रवंध क्या है, आत्मशक्तिप्रकाश की कुञ्जी है, सूर्य त्राटक क्या है? गृहस्थों के घर का वैद्य है, योगियों की ज्ञानविधायिनी, वकीलों की अपने नेत्रआकर्षण से न्यायकर्त्ता को अपने भाव में आकर्षण की शक्ति, न्यायकर्ताओं को दूरदर्शिता की शक्ति, वैद्यों को ज़रा सी पानी में नेत्रदृष्टि जमा कर देने ही से रोग भगा देने की शक्ति, विपद्ग्रस्त को उसके भविष्यत् फलाफल का ठीक अर्द्ध रात्रि में स्वप्न देने की शक्ति, सम्पन्नशाली को यथार्थ मार्ग का अवलम्बन करने की शक्ति, विद्यार्थी का तो एकमात्र सहारा अर्थात् अपने पाठ को तत्क्षण स्मरण करना, गूढ़ विषयों को हल करना, सहनशील, सर्वगुणसम्पन्न और अपने परीक्षाफल को स्वतः जान लेना, तथा सहधर्मियों के परीक्षाफलों को भी जानने की शक्ति, चोरी गए माल की तत्क्षण पता लगाने की शक्ति, और भी अनेक शक्तियां हैं योगी जितना अधिक अभ्यास करता जायगा उतनी ही शक्तियाँ योगी को प्राप्त होती जायँगी। विलम्ब केवल आप के संयमशक्ति पर है।

भुवनभास्कर का लक्ष्य करना अपनी आत्मा को प्रकाशपुञ्ज में लाना है। इसलिये इस महान् योगाभ्यास के लिये फिर भी लिखता हूँ कि योगी इस अभ्यास को करते हुए ब्रह्मचर्य का पालन अवश्य करे। कम से कम छः मास तक अभ्यास करते रहने पर ४० दिन का ब्रह्मचर्य होना अनिवार्य है। एकान्तसेवन इस योगाभ्यास में सोने में

सुहागे का काम देगा। अधिक बोलना, झूँठ बोलना सर्वथा त्याग दीजिये। भोजन सात्विकी पर विशेष ध्यान दीजिये। मांस मदिरा स्वप्न में भी नाम न लीजिये। तैल, मिर्चा, खटाई, गुड़ क़तई सेवन न कीजिये। जहाँ तक हो सके मलाई बादाम मक्खन घी दूध अधिक से भी अधिक अपनी रुचि पर भोजन कीजिये और अगर अन्न कम खाया जाय, उसके प्रतिफल अधिक सेवन किया जाय तो विशेष उपकार होगा। सूर्य त्राटक योग में नेत्रज्योति अवश्य कुछ कम होजाती है, लेकिन आप इस डर से छोड़िये मत, नेत्रज्योति फिर ठीक अपने स्थान पर आजाती है। सोते समय आँखों पर कच्ची हल्दी बारीक पीस कर दूध की मलाई के साथ पट्टी बाँध कर सो जाओ।

तुम सद्गुणों के भंडार हो

पातञ्जलयोगदर्शन इसलिये उस मनुष्य को योग का अधिकारी नहीं समझता, जो पहले यम और नियमों का पालन करनेवाला नहीं है। जो मनुष्य पूरे संकल्प के साथ यम नियमों का व्रत कर लेता है तो योगी स्वतः सद्गुणों का भंडारी हो जाता है।

पतञ्जलि ऋषि अच्छे प्रकार जानतेथे कि योग की महान् शक्तियाँ एक व्यभिचारी दुष्ट आचरणवाले व्यक्ति के पास चली गई तो यह संसार को भयानक गढ़े में ले जानेवाली होगी। इसलिये उन्होंने योग सीखने के लिये पहले यम और नियमों का पालन करना अनिवार्य रख दिया है। इसलिये वह नियम भी अति श्रेष्ठ है अगर योगी उन्हें हृदय से स्वागत करता है तो योगी भी संसार का हृदय-सम्राट् हो सकता है।

अगर योगी ने इन उच्च तथा सरल मृदुल और आत्मज्योतिप्रकाशक नियमों का अपने दिनचर्या में स्थान दे दिया तो निश्चय जानिये कि आपके जीवनमार्ग में अब कहीं को भी अन्धकार न रहेगा और आपकी आत्मज्योतिप्रकाशक शक्ति इस प्रकार ईश्वर को साक्षात् करती हुई, अपने आत्मीय जनों तथा समाजसुधार और देशउत्थान में महती कार्य सफलता करते हुए, तेजोराशि भगवान् भुवनभास्कर में अपने का लीन पावेंगे। इस प्रकार योगी अपने गृहस्थ धन्धों को करता हुआ भी अपने को मानसिक तरङ्गों की उच्च अट्टालिका में पायेगा।

इसलिये योगी को प्रथम अपने यम नियम पालन करते हुए अपने चरित्रगठन पर विशेष ध्यान देना चाहिये। क्योंकि विना चरित्रगठन किए योग की सिद्धि को प्राप्त नहीं हो सकते। संसार में कोई किसी का शत्रु मित्र नहीं, तुम आपही अपने शत्रु व मित्र हो, अगर किसी ने आपसे कुछ दुष्टता कर भी ली तो, आप योगी हैं, उसे अपने कर्तव्य-फल के लिये प्रकृति के नियम के सुपुर्द कीजिये। आप अपनी आत्मा को उसके वदला देने के लिये निर्बल न कीजिये। वरना आपने अपना बना बनाया यश का नाश कर दिया। इसलिये योगी को चाहिये कि अपने पूरे बल के साथ अपने दुर्व्यसनों को छोड़ने का प्रयत्न करे।

जब हम बार २ किसी बात को विचारते हैं, तो वह विचार मस्तिष्क पर इतना प्रभाव जमा देता है कि वह अभ्यास में परिणत हो जाता है। अर्थात् बार २ किसी भी फहल को करने को वह अपना स्वाभाविक गुण बना लेता है। इसलिये सिद्ध हुआ कि मनुष्य का स्वाभाविक

गुण गुण, अवगुण नहीं, वरन मनुष्य अपने गुणों का आप ही जन्मदाता है। इसलिये योगी को चाहिये कि अपनी बुरी आदतों को छोड़ने का प्रयत्न करे। इसके लिये निम्न प्रकारेण दुर्व्यसनों को छोड़ने का अभ्यास करे।

दुर्व्यसन छोड़ने का अभ्यास नं० १

जब कभी आप दुर्विचार या दुर्व्यसनों के शिकार बनते हों तो, आप उसे छोड़ने के लिये उद्यत हो जावें बल्कि उसी समय उस ऐब को छोड़ दीजिये, और अपने मन को धिक्कार दें कि "क्यों तू मुझे दिक किया करता है"। मन की संकल्पशक्ति जो आपने पहले प्राणायामादि करने में सञ्चारित की है, एकाग्र मन से इस समय उस "शिवसंकल्प" का इस विकल्प के साथ युद्ध के लिये नियन्त्रण कीजिये। अथवा उस स्थान से एकाएक उठ जाइये, जिस स्थान में आपको दुर्विचारों ने आ घेरा है। अपना नाम लेकर ज़ोर से इस प्रकार झिड़क दो कि "तुझे बार २ समझाया गया था कि तुझे योगी बनना है और यम नियमों का पालन करना होगा, फिर क्यों अपनी प्रतिज्ञा पालन नहीं करता है" अथवा "तुमको अपना व्रत पालन करना होगा या अपने शिव-संकल्प पर दृढ़ रहो" "और स्मरण रखो, जब कभी तुम्हें दुर्विचार आकर घेरें तो तुम अपने पूर्ण बल के साथ उसके ऊपर धावा बोल दो, और हर प्रकार से जीतकर आवो"। "तुम बड़े बलशाली हो, तुमने वैरी पर अधिकार जमा लिया है। इस प्रकार आप अपने तईं सज्जिशन देकर ज़बरदस्त इरादे से भी अवगुणों को नीचा दिखा सकते हो।

एक और उपाय है। वह यह है कि, जिस समय भी आपके ऊपर ये दुर्विचार आकर घेरें, उसी समय पूर्ण मनोबल के साथ उसे छोड़ दीजिये। ऐसा न करो कि इस समय इस कार्य को कर लो, फिर छोड़ दूंगा। ऐसा करने से, उस कार्य पर आपका प्रेम मालूम पड़ता है, और आप किसी प्रकार भी उस दुर्व्यसन को नहीं छोड़ सकते। बुरी आदतों का छोड़ना एकमात्र उत्तम से उत्तम तरीक़ा यही है कि उसी समय छोड़ दिया जाय। अपना नाम ज़ोर से लेकर बोलो कि "क्यों तुम अपने पवित्र जीवन को अपवित्र करते हो" और इस विचार को उसी समय छोड़ दो। हाँ, प्रथमावस्था में कुछ कठिनता अवश्य है लेकिन ज्योंहीं एक बार एक निष्ट होके छोड़ दोगे, तो द्वितीय बार अवगुणों को छोड़ने में कठिनता कुछ भी न रहेगी और छूट जायँगे।

दुर्व्यसन छोड़ने का अभ्यास नं० २

दुर्गुणों को छोड़ने का सबसे उत्तम और सहल तरीक़ा यह है कि जब आप संध्या वन्दनादि योग से निवृत्त हो लें, तब एकान्त कमरे में जाकर, अथवा उसी कमरे में जिसमें बैठकर आप प्राणायामादि करते हैं, और जहाँ पर किसी प्रकार मन के विचलित करने का कारण न हो, बाहर से भी चीख़ पुकार न सुनाई दे, इस प्रकार बैठ जाओ कि पीछे कुछ तकिया का सहारा हो या कुछ और सुविधाजनक वस्त्र हों, बैठे २ सहारा देकर लेट-सा जाओ, और अपने सारे शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ दो (लेकिन यह कार्य्य तभी कर सकते हो जब तुम प्राणाया-

मादि योग-साधन से शरीर को बिलकुल थका दोगे, या सूर्य-लक्ष्य का अभ्यास किया हो) और नींद लाने का प्रयत्न करो। अपने मन को चारों ओर से खींचकर एकाग्रता धारण कर लो जब देखो कि मन ने एकाग्रता धारण कर आँखों ने नींद का इशारा कर दिया तो मन ही मन अपना नाम लेकर उग्ररूप से सम्बोधित करो, और बोलो कि "ये अमुक–तुम्हारे ऊपर अमुक अवगुण हैं छोड़ दो" "ये अमुक– मैंने तुम्हारे ऊपर जो फलां दुर्गुण था, निकालकर बाहर फेंक दिया है अब यह दुर्गुण तुम्हारे में किसी प्रकार रह नहीं सकता है, जब तुम उठोगे, तो ये दुर्व्यसन कदापि देखने में नहीं आवेंगे। अब तुम हर प्रकार से इन अवगुणों से पवित्र हो चुके हो। भविष्यत् को ये कलंकित गुण तुम में कदापि न देख सकूँगा। लो अब तुम उन बुरे गुणों का सदा ही प्रतिवाद करते रहोगे। लो तुम अब उन दुर्व्यसनों को छोड़कर जागृत हो जाओ।"

इस प्रकार योगी अर्द्ध सुषुप्तावस्था लाकर कम से कम एक सप्ताह तक अपने आत्मा को सज्जेशन देकर एकाग्रता धारणकर अपने मन के स्थिर और दृढ़ विचारोंवाला बना सकता है और सदा के लिये प्रभाव जमा रहे। अब उठकर एकाएक अपने कार्य में संलग्न हो जाइये।

अभ्यास नं० २

नूतन सद्गुणों को अपने में प्रवेश करना।

जब नये सात्विकी गुण अपने में प्रवेश कराने हों तो इसी प्रकार अपने को पूर्ण संकल्पशक्ति के साथ एकाग्रता धारण करो और अर्द्धसुषुप्तावस्था लाने का प्रयत्न करो,

और इच्छाशक्ति को इतना प्रबल और उत्तेजित करो कि सूक्ष्म शरीर आपकी आज्ञापालन करने का यत्नशील हो जावे, और मन को धारणा, ध्यान, समाधि की तरफ़ लगा दो, तथा नींद आने की प्रतीक्षा करो। शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ दो।

जब तुम समझो कि अब आँखें नींद के लिये उकता रही हैं, पूर्वोक्त प्रकारेण अपने नाम को सम्बोधित करके मन हीं मन में यों कहो कि "मैंने तुमको अमुक कार्य करने के लिये टेव डाल दी है, तुम अमुक कार्य करने को उत्साहित थे तुम्हारे भीतर अमुक कार्य करने की प्रबल इच्छा थी, इसलिये इस सद्गुण के प्रतिवाद में अब कभी भी तुम्हें बुरे विचार आक्रमण नहीं कर सकते जब तुम उठोगे तो एकाएक उन्हीं विचारों को लेकर उठोगे, जो तुम्हारी इच्छा थी। उन बुरे विचारों को उठते हुए में एक भी तुम्हें न दीखेंगे उठो, अब तुम में अमुक कार्य करने की स्वाभाविक प्रकृति हो चुकी है"। "उठो"।

जिस समय तुम उठते हो एकाएक उठकर चले मत जाओ, बल्कि ५—१० मिनट तक वहीं ठहरकर नूतन सद्गुणों का अच्छे प्रकार विचार करो। इसी प्रकार ६—७ दिन तक अभ्यास करते जाइये, जिससे ७—८ दिन में वही शुभ गुण तुममें विद्यमान होंगे जिसकी तुम्हें इच्छा थी।

अभ्यास नं० ४

भय को दूर करना

आत्मविश्वासी के लिये डरना, झिझक करना तथा हया शर्म करना, आत्मोन्नति के मार्ग में रोड़ा अटकाना है।

आत्मोन्नति का केवल एकमात्र साधन योग है। योगी के लिये किसी प्रकार का भय करना योग पर कलंक लगाना है। डरपोक बुज़दिल मनुष्य कभी योग की सिद्धियां प्राप्त नहीं कर सकता है। जो मनुष्य जरा २ सी बात पर डर झज्जक चौंकता है वह कभी भी एकाग्रता उपलब्ध नहीं कर सकता है, और जो मनुष्य एकाग्रता हासिल न करेगा वह कदापि योगी बनने का अधिकारी नहीं हो सकता है। इसलिये योग-सिद्धियों के अभिलाषियों को भय करना-चौंकना तथा शर्मीलेपन को बिलकुल छोड़ देना चाहिये।

बात २ पर लज्जा से शिर नीचा करना, और दूसरे की मनसुहाती पर हां जी भरना, फिर अन्य, अन्य के प्रतिवाद में जो कुछ कहे (जिसको आपने प्रथम ही संपुष्टि की हो) उसे झटपट अपनी आत्मा की अनिच्छा होते हुए भी प्रतिवादी की हां में हां मिलाना कितना जघन्य पाप है ? कितना अनर्थ है ? कितना दुष्कृत कर्म है ? क्या वह अपने को आस्तिक कहाने का दम भर सकता है ? क्या वह योग की सिद्धियां प्राप्त कर सकता है ? कदापि नहीं।

मन को जितना ही आत्मा की अनुकूलता में ले जाने का प्रयत्न करोगे, उतना ही आपका मन विभिन्न कर्मों से रक्षित रहते हुए भी आत्मा की आज्ञापालन करने का अभ्यासी बन जायगा। केवल एक, दो, तीन, समय की प्रतीक्षा कीजिये, जिस समय आपको कसौटी के ऊपर उतरना हो सहस्त्र बाधाएँ उपस्थित होने पर भी आप वही कीजिये, वही कहिये, वही देखिये, वही सुनिये, वहीं जाइये, वहीं आइये, जो आपकी आत्मा की प्रेरणा हो। भले ही मन की

तरंगें आपको स्वर्ग और नर्क, आसमान और पाताल, जहां चाहे वहां ले जावे, लेकिन तुम अपनी आत्मा को कलुषित होने मत दो। जहां एक, दो, तीन, चार आप कसौटी पर उतर पड़े कि आपका वही अभ्यास बन जायगा, जो आपने शिव-संकल्प से ठान रक्खा है। निश्चय जानिये, जहां जाइये, साधुवाद की प्रतिध्वनि चारों ओर से सुनाई देने लगेगी। तब आप कंस के कारागृह में कृष्ण को देखेंगे, हिरण्यकशिपु की तलवार के आगे प्रह्लाद को देखेंगे काशी के मणिकर्णिका घाट पर सम्राट् हरिश्चन्द्र को देखेंगे, महाराजा रावण की लंका में अकेले राम को देखेंगे। बौद्धों के बीच शंकर और धर्महीन भारत के मध्य में दयानन्द को देखेंगे।

इसलिये जहां तक बने निर्भय रहने की आदत डालो। वही कार्य करो, जिसमें निर्भयता प्राप्त हो। ऐसी संगत में मत जाओ जहां तुम्हें भय, क्रोध, लज्जा का कारण बनना पड़े। एकान्तस्थान में जाने की टेव डालो। अगर आपका व्यवसाय ऐसा है कि आठों प्रहर जनसाधारण में रहना पड़े तो, कम से कम एक घंटा अपने ही मकान में सन्ध्या के समय अँधेरी कोठरी में रहने का अभ्यास डाल दो जिससे आपकी आत्मोन्नति होती जायगी, और सूक्ष्म विचार ध्यानाकर्षित होते जायँगे और मनुष्य-जन्म का मूल्य समझने लगोगे।

विपत्ति में, कष्ट में, जान के ख़तरे में, किसी भी समय में हो, डर, झिझक, शर्मीलापन अपने ऊपर कभी मत आने दो, वरन धैर्य और साहस के साथ उस समय का मुक़ाबला करो। जितना डर, भय, लज्जा करोगे उतना ही

रसातल में पड़ोगे, और हानि उठाओगे। इसलिये घब-राहट, डर, झिझक को किसी समय भी अपने ऊपर मत आने दो।

अगर तुम सचमुच गृहस्थ रहते हुए भी अपने जीवन को योगी का जामा पहनाना चाहते हो, तो प्रथम यम नियमों का पालन करना सीख लो, तत्पश्चात् प्राणा-यामादि क्रियाओं से मन को थकित कर दो, और सूर्य्यसंयम द्वारा मन को एकाग्र कर लो। फिर इस प्रकार से जो भी अवगुण तुम्हारे पैत्रिक संस्कार में डर झिझक आदि हैं तुम्हारे प्रयत्न करने से भी न छूटे हों तो इस प्रकार से छोड़े जा सकते हैं।

प्राणायामादि क्रियाओं से शरीर को भले प्रकार थका डालो, और हो सके तो सूर्यत्राटकयोग भी कर लो। अब एकान्त कमरे में जाकर पिछले लिखे अभ्यासों के अनु-सार नींद लाने का प्रयत्न करो। शरीर को बिलकुल ढीला छोड़दो, अब आँखें मूंदने लगेंगी, तभी तुम अपने को "सजिअशन" दो। मन-ही-मन अपने नाम को पुकार कर कहो कि "ये अमुक तुमको भय-भूत बुरी तरह सता रहा है, आज से तुम इस झूठे भय को दूर कर दो" "याद रहे, भूत प्रेत शाकिनी डाकिनी इनकी कोई हस्ती नहीं है, यह केवल मन का बहम है, इस व्यर्थ के मन के बहम को दूर भगा दो" "और एक शर्मीलापन तुम्हारे में बड़ा ऐब है। तुम ईश्वरभक्त होते हुए भी व्यर्थ की शर्म-हया से क्यों अपने को कलंकित करते हो। इस अवगुण को फ़ौरन् छोड़ दो।" "ऐ अमुक, तुम बात २ पर झिझक जाया करते हो क्या यह आदत तुम छोड़ नहीं सकते?

"अवश्य छोड़ सकते हो" "अभी छोड़दो" "जब तुम उठोगे इन वाहियात अवगुणों को लेकर न उठोगे बल्कि तुम सात्विकी गुण लेके उठोगे।" "हर चन्द तुममें यह दुष्ट गुण न देख सकूंगा" "अब उठो, लेकिन इनको छोड़ के ही उठना" "हरगिज़ यह दुष्ट हानिकारक व्यसन लेके मत उठना।"

इस प्रकार आप अपनी आत्मा को सज्जिशन दो, और अपने अवगुणों को जहांतक बनसके छोड़ने का घोर प्रयत्न करो। दस पन्द्रह मिनट तक सोते रहो, उठकर ठंडे पानी से मुँह धो लो। यह क्रिया सुबह ही करनी चाहिये और पूरे एक सप्ताह तक।

उपर्युक्त जो प्रयोग लिखे गए हैं, वह केवल उन योगियों के लिये लिखे गये हैं जो आत्मनिष्ठ हैं। जिनमें संयम-शक्ति प्रचुरराशि में उपार्जन की हुई हो। जिन्हें सदा ही योगी बनकर गृहस्थाश्रम को सुखधाम बनाना हो। जिनका एक-मात्र लक्ष्य अपना और अपनी सन्तान का चरित्र गठन पर हो, दूसरे की वस्तु का मूल्य रखते हों। भोजनादि का विशेष ध्यान रक्खो। भूल से भी ऐसे निकृष्ट भोज्य पदार्थ को मत खाओ, जो दूसरे के मन को दुख देके या दुष्कृत्य पापाचार से संचारित किया गया हो। ऐसे भोजन को भी मत खाओ, जहां आचार का विचार न किया गया हो। भोजन में बड़ी शक्ति है। भोजन ही से शरीर बनता है। जैसे २ खाना खाओगे वैसे २ विचार स्फुरित होते जायँगे। मांस खाना पाप है, लेकिन अन्याय से जो धन उपार्जन किया जाता है इससे कहीं अधिक मांस खाना अच्छा है। मांस हिंसा से मिलता है, लेकिन एक प्राणी की हिंसा से

दस बीस प्राणी अपना पेट भर सकते हैं लेकिन अन्याय से उपार्जन किया हुआ अन्न, धन्न उस मांस से भी निकृष्ट है, क्योंकि उसमें घोर दुष्कर्म से अन्न धन उपार्जन किया है। मांस खानेवाला कदापि आस्तिक होने का दम नहीं भर सकता है। हिंसक वृत्तिवाला मनुष्य सूक्ष्म विचार नहीं रख सकता है। मन से भी हिंसा करना पाप है। योगीजन ईश्वर को व्यापक मानते हैं, तब मन से भी हिंसा कैसे किया जाय। किसी से शत्रुता करना क्या ये हिंसा नहीं है? अगर आपकी सम्मति किसी से न मिलती हो तो प्रेम ही से विपक्षी का प्रतिवाद करो, न कि कठोरता के शब्दों से। योंही हँसी मजाक़ में भी दूसरे को कष्ट मत दो। अगर किसी से हँसी मज़ाक़ करनी हो तो दोनों व्यक्ति खिल-खिला कर हँसें, न कि किसी प्रकार की ग्लानि हो। भाव यह है कि जहाँतक तुम्हारा पुरुषार्थ हो प्राणिमात्र को सुख पहुँचाने का प्रयत्न करो।

योगी के लिये सत्य का व्यवहार ही योग की सिद्धि है। झूठा विश्वास करना भी योग की सिद्धि में बट्टा लगाना है। सत्य भाषण करना सत्य ही मानना सत्य ही करना योग की अंकुरित वृक्ष की जड़ में पानी डालकर विशाल वृक्ष से मोक्षफल की प्राप्ति करना है। जिस फल के खाने को तुम्हारी हार्दिक इच्छा रहती है, वह फल केवल सत्य बोलने से अगर मिलता हो, तो क्यों नहीं एक मात्र सत्य मंत्र का जाप किया जाय।

यत्र तत्र तो चोरी करना आप पाप समझते ही हैं, लेकिन अपने घर में भी, गृहस्वामिनी की अनुपस्थिति में विना श्रीमती की आज्ञा के कोई पदार्थ नहीं छू सकते।

उपवनों में जाते हुए वृक्षों से पतित फल भी विना आज्ञा माली के उठाना चोरी कहलाती है। हँसी ठट्ठा में भी चोरी करना अपने को बुरी आदत में डालना है। शास्त्रकारों ने मन, वच, कर्म का कर्तव्य माना है, इसलिये शास्त्रनिषिद्ध कर्म मन, वच, कर्म से भी न करे।

परस्त्री गमनादि भी चोरी में है। परस्त्री उपभोग करनेवाला कदापि शांति उपलब्ध नहीं कर सकता है, चाहे कैसा ही शुद्धाचरण का ढकोसला ही क्यों न दिखलावे, लेकिन उस व्यक्ति का पापी हृदय सदा ही थरथराता रहता है। संसार परिवर्तनशील है, आज वह समय नहीं है जब कि ४०-५० वर्ष की आयु तक ब्रह्मचारी हो रहते थे, और नहीं जानते थे कि स्त्रियों से रमण करना भी कोई भोग है? वह वैदिक काल केवल वंशपरम्परा के निमित्त स्त्री-सहवासादि करते थे। तथापि उन ऋषियों ने कामियों की नाड़ी का अच्छे प्रकार स्पन्दन करके इतना लिख दिया है कि "अपनी ही स्त्री से संतुष्ट रहना भी ब्रह्मचर्य कहलाता है।" इसलिये प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि ब्रह्मचर्य का पालन करे, क्योंकि व्यर्थ यत्र तत्र वीर्यरूपी अमूल्य रत्न को बखेर फैंकना अपने जीवन को चोरी के जुर्म में प्रकृति की कारावास की यन्त्रणालय में अपने को सड़ाना है। इसलिये जहाँ तक हो सके ब्रह्मचर्य का पालन करे।

ब्रह्मचर्य पालन करने का सबसे अच्छा उपाय यह है कि, षट्रस आदि पदार्थ मदिरा, मांस का त्याग, मिर्च, तैल, लहसन, प्याज आदि निषिद्ध और वीर्य उत्तेजक पदार्थों का सर्वथा त्याग, मिष्टान्न भोजन कम मात्रा में किया जाय तो अत्युत्तम है। जितना ही ब्रह्मचर्य पालोगे

उतना ही योग की सिद्धियाँ हाथ बाँधे खड़ी होंगी। इसलिये इस अमूल्य रत्न को जहाँ तक हो सके रक्षा करो। वृद्धावस्था में इस रत्न को बेंच खाओगे।

उपर्युक्त साधना योगी तब ही कर सकता है जब अपने मन की इच्छाओं पर पूर्ण अधिकार जमायेगा। व्यसन वासनाओं पर क़ाबू पाना ही योग की सिद्धि है। केवल मन की बागडोर अपने हाथ में मज़बूती के साथ पकड़े रहो। अगर अपनी ख़्वाहिशात पर क़ब्ज़ा किये रहोगे तो एक दिन आप ऊँचे शिखर पर अपने को पाओगे।

साथ ही चरित्रगठन पर भी विशेष ध्यान रक्खो। अर्थात् वस्त्रादि की पवित्रता। घर में कोई वस्त्र ऐसा न हो जो घृणा का उत्पादक हो बर्तनों की पवित्रता पर इतना ध्यान रक्खो कि कभी भी आलस्य में आकर कस निकले हुए बरतन में भोजन न खाओ या न बनाओ क्योंकि इस विषैले बासन से तमाम रक्त में विष मिश्रण होके योग की क्रियाओं पर धक्का पहुँचता है। इसलिये शरीर स्वच्छ, वस्त्र सुथरे, बरतन चमकीले, घर आँगन सुन्दर दर्शनीय बनाए रखने का हार्दिक परिश्रम करो। अपने पास चाहे नित्य बदलने के लिये कपड़े न हों, और बिलकुल टूटे फूटे हों, लेकिन उन मैले कुचैले बढ़िया वस्त्र पहननेवालों से, आपकी लोग प्रतिष्ठा करेंगे, अगर आपके वस्त्र साफ होंगे। ग़रज़ कि मन साफ़, भाषण प्रिय, शरीर स्वच्छ, बरतनादि चमकीले, कपड़े सुथरे और मकान साफ़, तब आपका ध्येय साफ़ हो सकता है।

घर साफ़, तन साफ़, भीतर साफ़, बाहर साफ़, लेकिन सफ़ाई का मूल्य तबहीं होगा जब "संतोष" होगा।

राज्य मिल गया तो क्या और छिन गया तो क्या, धीर पुरुष दोनों दशा पर एक समान दीखते हैं। परिश्रम करते हुए कर्तव्यफल हानि हो या लाभ, भले प्रकार फलाफल का विचार रखते हुए हर्ष, शोक न करना, समान भाव से रहना, समानता का व्यवहार करना, दूसरा यह न समझे कि इसे अमुक लाभ पर मद और अमुक हानि पर ईर्ष्या हो गया है, इसी को संतोष कहते हैं।

जब संतोषी होगये तो, कष्ट उठाकर भी धर्म और सच्चाई की रक्षा करते रहना, तभी "तप" कर सकते हो। विना कष्ट उठाए धर्म की रक्षा हो ही नहीं सकती।

जिस वृक्ष-फल की आकांक्षा रखते हो, वह वृक्ष फल तभी देगा, जब उसे नित्य खाद और पानी दिया करोगे। दो चार दिन भी भूल से पानी आदि से संरक्षण न किया जायगा तो वृक्ष कुम्हला जायगा। इसी प्रकार योग की सिद्धियों को तभी लब्ध कर सकोगे जब नित्य "स्वाध्याय" किया जायगा। ज्ञान स्फुरित करने के लिये "स्वाध्याय" नित्य करना चाहिये। अन्यथा ज्ञान लोप होता जायगा। इसलिये "स्वाध्यायान्मा प्रमदः"।

नित्य ऋषिकृत ग्रंथ तथा अन्य धार्मिक विद्वानों की पुस्तकों का पढ़ना और ईश्वर की मर्जीपर अपनी इच्छाएँ समर्पण करना। आत्मप्रसाद के लिये वारंवार प्रार्थना करना। ईश्वर सर्वगुणसम्पन्न है और वही शुभ गुणों का भंडार भी है, इसलिये "ईश्वरप्रणिधानम्" अर्थात् परमात्मा का ही चिन्तन नित्य हर घड़ी हर बेला करो।

योग की सिद्धियाँ क्या हैं? चरित्रगठन है। चरित्रगठन क्या है? यम नियमों का पालन है। यम, नियम, आ-

सन, प्राणयाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि, यही राजयोग के अङ्ग हैं। यही योगी के रात दिन का जाप है। इनको विधिपूर्वक पाठ करने से सूक्ष्म विचारों की उत्पत्ति और महान् से महान् ज्ञान की प्राप्ति होती है। प्रकाश और अन्धकार का परस्पर विरोध है। अप्रकाशी जन अँधेरे में रोता और टक्कर खाता है। लेकिन यम नियम पालन करनेवाला योगी को, सारे ब्रह्माण्ड का नक़्शा अपने नेत्रों आगे दृष्टिगत होने लगता है। अष्टांगयोग चरित्रगठन के लिये है। चरित्रगठन किनको करना चाहिये? गृहस्थ जीवन को सुखमय बनानेवाले के लिये।

अट्ठारह अध्याय गीता-पाठ नित्य करने से क्या लाभ, अगर चरित्रगठन में त्रुटियाँ हैं। चारों वेद छओं शास्त्र पढ़ लिये, अगर चरित्रगठन कर लिया। यही आर्यत्व है और यही सनातनधर्म है।

गृहस्थ-आश्रम ही योगाश्रम है। इसी आश्रम से अनेक सिद्धियाँ और मोक्ष-फल की प्राप्ति होती है। यहीं से भिक्षुक भिक्षा माँगते हैं, यहीं से विद्यार्थी विद्या उपार्जन करते हैं, यहीं से ज्ञानी अध्यात्मवाद के गूढ़ विषय को हल करता है। यहीं से संन्यासी संन्यास का दंड कमण्डल माँगता है, यहीं से राजा राज्याभिषेक का तिलकोत्सव माँगता है यहीं से वैरागी वैराग्य की याचना करता है, और यहीं से भगवान् दुःखित प्राणियों के कष्ट निवारण के लिये मनुष्य-देह धारण करते हैं।

गृहस्थ-आश्रम में महान् सिद्धियाँ हैं। सिद्धियाँ उपलब्ध करना भी सहल तरीक़ा योगियों के लिये पीछे लिखे हुए यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि

ये ही अष्टांगयोग हैं। दिन भर भले प्रकार अपने कारोबार में संलग्न रहो, किसी प्रकार की त्रुटि न आवे। अन्न, धन, भले प्रकार उपार्जन करो। महान् से महान् व्यवसाय चलाओ, छोटा से छोटा हुनर कर लो। महलों में रहो, झोपड़ियों में रहो, लेकिन चरित्रगठन पर विशेष ध्यान देते जाओ। अगर योगी ने निश्चयात्म होके अपने कारोबार करते हुए परमात्मा का गुण, कुछ अंश में भी उपलब्ध करलिए तो निश्चय है कि पीछे लिखी सिद्धियां और सद्गुण अवश्य प्राप्त कर लोगे, और प्रकाश ही प्रकाश चारों ओर दृष्टिगत होने लगेंगे।

अभ्यास नं० ५

साक्षात् दर्शन।

जो काम करो, निष्ठ होके करो। उस निष्ठ में तिलमात्र भी अनिष्ठता मत आने दो। जिस अनुष्ठान में बैठो, एकमात्र धारणा उसी पर लगा दो। खाना, पीना, उठना, बैठना, घरबार, बाहर, भीतर, ऊपर, नीचे, देश, परदेश, अपना, पराया, भाई, बन्धु, स्त्री, पुत्र, मा, बाप, शत्रु, मित्र, ग़रज़ कि अपना शरीर भी सब भूल जाओ, लेकिन उस इष्ट को जिस पर आप निष्ठ हैं धारणा ध्यान समाधि वरन और भी जो कुछ हो, केवल उसके अर्पण कर दो। ऐसा कर दो कि शेष अपने पास कुछ भी न रहे और वही मैं हूं बस, वही इष्ट जिधर जाओ अँधेरे में, उजाले में, खाने के ग्रास में, पीने के पानी में, रात के सोने में, दिन के जागने में, घर में, बाहर में, श्वास में, प्रश्वास में, जहाँ जाओ, जिधर जाओ, जहाँ उठो, जहाँ बैठो, जिधर देखो,

जहाँ देखो, केवल वही लक्ष्य जिस लक्ष्य पर आप लक्षित हो चुके हो, केवल वही शब्द, जिस शब्द की व्युत्पत्ति पहले निश्चित हो चुकी है, केवल वही दृश्य, जिस दृश्य की आकांक्षा थी, सिर्फ वही संकल्प, जिस पर शिव संकल्प हुआ था, बस वही, जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है।

द्विविधावाले को द्विविधा है। संकल्प में विकल्पता मत आने दो। सिद्धि हाथ जोड़े खड़ी है।

मान लीजिये योगी को बल का सञ्चार करना है और इतना बलवान् बनना है कि हस्ती को भी पराजय करना है। बस, यही इष्ट है, यही अनुष्ठान है, यही उपास्यदेव है, यही एकमात्र मंत्र-जाप है, यही धारणा, यही ध्यान, यही समाधि है।

अगर योगी को मित्र बनना है या सारे संसार को अपना मित्र बनाना है तो एकमात्र स्तोत्र-पाठ मित्रता का पढ़ो और ऐसा पढ़ो कि खाते-पीते सोते-जागते एक-दम मन मित्रता पर लवलीन रहे। अपना स्वभाव भी मित्रता के ढाँचे में ढल रहा है। अब योगी को कुछ दिन लगातार परिश्रम करने से मित्र ही मित्र दृष्टिगोचर होंगे।

राजनैतिक योगी बनने के लिए कृष्ण भगवान् का लक्ष्य कर लो। सन्ध्या से निवृत्त होकर उसी आसन में, जिसके कि सामने से "द्वारका में कृष्णार्जुन युद्ध-प्रतिज्ञा, और पीछे से महाराजा दुर्योधन इसी प्रतीक्षा में बैठे हों" चित्र रख दो। तीन दिन तक आधे घंटे तक एकमात्र लक्ष्य चित्र को कर लो, तत्पश्चात् चौथे दिन नेत्र बंद कर लो और मनोबल से चित्र देखने की बलवती इच्छा

प्रकट करो। कुछ दिन तक मनोबल के अवलोकन से कुछ क्षण के लिये चित्र दिखलाई देगा और फिर तत्क्षण लोप हो जायगा। लेकिन लगातार आधा घंटा नित्य अभ्यास करने से १५—२० दिन में स्थायी रूप चित्र की हो जायगी। यहाँ तक हो जायगी कि योगी के नेत्र खोले हुए में भी जहाँ जाओ जिधर जाओ, श्रीभगवान् का आह्वान करते ही सामने शंख चक्र लिए हुए प्रत्यक्ष मूर्ति दीखने लगेगी और ऐसे दीखने लगेगी कि भूलने से भी भूल नहीं सकते हैं।

जब योगी ने कृष्ण-मूर्ति पर भावना की तो, योगी को चाहिये कि परमात्मा से या भगवान् कृष्ण से जो जैसा मानता हो उसी प्रकार प्रार्थना करते हुए कि भगवन्! आप जिस प्रकार दुष्टों को दमन करनेवाले और शिष्टों को सान्त्वना देनेवाले हो, उसी प्रकार मुझे भी वरदान दीजिये आप महान् से महान् हिंसक बलियों को क्षण भर में नीचा दिखानेवाले हैं, और क्षीण से क्षीण अपङ्ग को, बल-शालियों से मुक़ाबिला रखने की हिम्मत आप ही प्रदान करते हैं। हे भगवान् कृष्ण! निराधार को आधार देनेवाले तुम्हीं हो या आधार दिखलानेवाले तुम्हीं हो। हे भग-वन् प्रभो! आपने भगवान् कृष्ण को अतुल शक्तिशाली, अतुल योगी, अतुल संसार का भोगी होकर भी संसार को तुच्छ निर्देश किया है, ऐसा ही ज्ञान अधिक नहीं तो कुछ अंश में मुझे भी दान कीजिये। भगवान् कृष्ण भोक्ता होकर भी वैरागी हैं, महाराजे होकर भी प्रजा हैं। अगाध ज्ञानी होकर भी भीलों से प्रेम करनेवाले हैं। सुदर्शन-चक्र होते हुए भी महाभारत के घमासान युद्ध में विना

अस्त्र के हैं। दुष्टों को रोदन करानेवाले होने पर भी वंशी से सबको मोहित करनेवाले हैं। भगवन् गोपाल! आपने द्रौपदी की लज्जा रक्खी थी, मुझे खड्गबहादुर सिंह राणा बनाओ। हे भगवन्! ऐसा ही मुझे गुण दीजिये, ऐसा ही बनाइये, मैं अवश्य ऐसा होऊंगा, निश्चय बनूँगा, कोई शक्ति मुझे गोपाल बनने से टाल नहीं सकती है। इस प्रकार आँख मूँदे हुए मधुसूदन के दर्शन करते हुए चाहे भगवान् केशव से अथवा परमात्मा से उपरोक्त गुण मांगने की याचना करो। अगर योगी सच्चे हृदय से एक लग्न से निश्चित होकर, ध्यानमग्न होकर याचना नहीं, जबरदस्ती से भी ईश्वर के वा श्री भगवान् कृष्ण-चन्द्र के सर्वगुणसम्पन्न कोष से उपरोक्त सद्गुणों की चोरी भी करेगा तो परमात्मा को यह बेजा हरक़त बड़े प्रेम से स्वीकार होगी और इस गुस्ताख़ी पर वह योगी को छाती से लगायेंगे, और सान्त्वना देते हुए यही सद्-गुण वरदान देंगे।

योगी जब श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् पर अपना योग का अच्छे प्रकार अभ्यास कर लेता है तो योगी अपनी सिद्धि पर फूला नहीं समाता है। योगी जहां जाता है श्रीगोपाल सदा ही योगी के आगे २ चलता है। योगी प्रश्न करता है केशव उत्तर देते हैं, योगी हंसता है भगवान् मुस्कराते हैं। योगी भगवान् से नाराज़ी ज़ाहिर करते हैं तो केशव सा-न्त्वना देते हैं। योगी जिस रूप से दर्शन देने को कहते हैं योगेश्वर बहुरुपिया बनकर उसी प्रकार का दर्शन दे देते हैं। ये सब कुछ होता है, लेकिन यह सिद्धि केवल एकान्त-भ्रमण, एकान्तवास, कम बोलना, व्यर्थ के गपशप में

समय को न गँवानेवाले को होता है। इसलिये जहां तक बने अच्छे प्रकार अभ्यास करके एकान्तसेवन का भी ध्यान रखना चाहिये।

उपरोक्त भगवान् कृष्ण-दर्शन का अभ्यास करो अथवा किसी और श्रेष्ठ जन जो आपको प्रिय लगे किसी को भी योगी अपने मन को जमाने के लिये चुन सकता है। यह अभ्यास मन को ही जमाने के लिये नहीं है बल्कि ख़ासकर अपनी इच्छा-शक्ति बलवर्ता और ध्याता के गुण-ग्रहण करने का एक ही उपाय है। इसलिये मनचाहे, श्रेष्ठ जनों की आकृति को मन से खींच लेने की यह अभ्यास विशेष उपकार रखता है। इस अभ्यास से योगो आश्चर्यजनक कार्य कर सकता है। अगर इस अभ्यास के करनेवाले दो योगी आपस में यह सलाह कर लें कि अमुक समय अपने २ अभ्यास-मन्दिर में बैठकर, चारों ओर से मन को इकट्ठा करके अपने-२ मन के भाव एक दूसरे पर प्रयोग करें तो एक योगी के भाव दूसरा योगी अच्छे प्रकार हल कर सकता है। जिसको कि योगी को उसी समय नोटबुक में नोट कर लेना चाहिये और फिर प्रयोक्ता प्रयोगी पर पत्र द्वारा सारा समाचार ज्ञात कर सकता है।

लेकिन प्रयोक्ता और प्रयोगी के समय का निश्चित करना प्रयोगादि का स्थान ठीक निर्णय कर लेना चाहिये। उसी प्रकार आँख मूँदना और प्रयोक्ता ठीक उसी प्रकार प्रयोगी की आकृति-चिन्तन करते हुए कहे कि यह अमुक सन्देश मैंने तुमको भेजे हैं तुम इस अपने नोटबुक में अङ्कित कर दो। और प्रयोगी भी ठीक एकान्तस्थान पर प्रयोक्ता की आकृति का चिन्तन करके अपने में इस प्रकार वार्ता-

लाप सुन रहा है जैसे कि वह सामने ही बात कर रहे हों। अगर योगी ने इस अभ्यास को पुख्ता मज़बूत बना लिया तो इस अभ्यास से इससे अधिक दूरदराज़ के समाचार भी प्राप्त कर सकता है।

लेकिन यह शब्द दुबारा तिबारा लिखे जा चुके हैं कि पहले अपने मन को निश्चित कर लो कि मुझे अमुक कार्य करना है, तब धुन में मस्त हो जाओ कि यह कार्य अवश्य होना है। निश्चय है कि वह कार्य होके ही रहेगा, कभी टल नहीं सकता है। हां, कुछ विलम्ब लगे, अधीर्य होने की आवश्यकता नहीं है, देर है, अँधेर नहीं है।

आवश्यक निर्देश

मेरा विचार है कि आप मेरे समान इस विचार पर पहुंचे होंगे कि हमारे वर्तमान तथा भावी जीवन को सुखी और दुखी बनानेवाली प्रारब्ध हमारे "विचार" पर निर्भर है। जैसे २ विचार मस्तिष्क पर घर करेंगे, वैसे ही वैसे प्रारब्ध होती चली जायगी।

इस बात को सदा ध्यान में रक्खो कि जब तुम सत्य, प्रेम, सरलता और विश्वास भरा जीवन बिताओगे, तो कोई वस्तु तुमको संसार में दुख न पहुँचा सकेगी। तुम्हारा जीवन सुख और शान्तिमय जीवन होगा।

यद्यपि मैं प्रत्येक अभ्यास के साथ उसके सम्बन्ध में चिन्तन करने के वाक्य 'शजिशन' शब्द लिख आया हूं, परन्तु सुख, शांति, स्वास्थ्य, आनन्द और सफलता प्राप्त करने और हृदय में आशा और आनन्द की तरंगे उत्पन्न करनेवाली कुछ बातें यहाँ लिखता हूं।

जब तुम प्रातःकाल उठो तो अपने बिछौने पर ही उठकर बैठ जाओ और मन को एकाग्र करके अत्यन्त प्रेम से उस प्रभु को धन्यवाद दो, जो तुम्हारा और सम्पूर्ण सृष्टि का रक्षक है। जो उस समय भी तुम्हारा रक्षक था, जब कि तुम अचेत सोते थे । इसके अनन्तर शौचादि से निवृत होकर सन्ध्या प्रार्थना करो और आसन से उठने के पहले इन वाक्यों पर ध्यान लगाओ।

"मेरा सम्बन्ध ज्ञान के स्रोत के साथ है, जहाँ से अनन्त ज्ञान मेरी ओर आ रहा है । मेरा उस ज्ञानस्वरूप से निकट संबंध है "वह मुझसे न्यारा नहीं है" "वह मुझमें है" उससे मैं ज्ञान और बल प्राप्त कर रहा हूं । निस्सन्देह मैं ज्ञान की मूर्ति बन रहा हूं। मैं आशा, आरोग्य और सुख से भरपूर हूँ ।

"मैं अमर हूं, मुझमें भय नहीं है प्रत्येक अवस्था का, जो मुझमें गुजरेगी, हर्ष और वीरता से स्वागत करूंगा"।

"मैं अपने मन से प्रतीकार, घृणा ईर्ष्या द्वेष आदि विकारों को निकालकर बाहर फेंकता हूं।" "मैंने उन्हें निकालकर बाहर फेंक दिया" मैं प्रेममय हूं और स्वार्थ से रहित हूं"।

"आज दिन भर मैं अपने को संयम में रक्खूंगा कोई मनुष्य अपनी चेष्टा से मुझे असंयमी नहीं बना सकता है। मैं किसी से संयमहीन नहीं बन सकता हूं"।

"मैं स्वस्थ हूं मुझमें कोई रोग नहीं है मैं आशापूर्ण हूं कोई दुःख या निराशा मुझे दुःखी और निराशावादी नहीं बना सकता है"।

"मैं शक्ति हूं" कोई निर्बलता मुझमें प्रवेश नहीं कर सकती है।

रात्रि को सोते समय फिर ईश्वर से प्रार्थना किया करो और व्यतीत दिवस के लिये ईश्वर को धन्यवाद दो, और देखो कि आज का दिन जो व्यतीत हुआ है, वह तुम्हारे लिये सुखमय, शांतिमय और सन्तोषमय था कि नहीं। यदि नहीं था तो उसके कारण पर विचार करो, और भविष्य में उस नियम के अनुगामी बनने का दृढ़ संकल्प करो। यदि कोई कोई चेष्टा तुमसे ऐसी हुई हो कि जिसके कारण आपको चिन्तित या उद्विग्न रहना पड़ा हो तो, भविष्य के लिये उससे बचने के लिये भी दृढ़ व्रत कर लो, और परमात्मा से बल मांगो कि भविष्य में ऐसी चेष्टा मुझसे न हो। परमात्मा से प्रार्थना करो कि भविष्य इस प्रकार से सुखमय जीवन प्रदान कीजिये कि मुझसे सबका भला हो। इस प्रकार ईश्वर-प्रार्थना करते हुए सो जावे।

"मैं अपने मन वच कर्म से किसी को कष्ट न पहुंचाऊंगा, मैं दृढ़ व्रत के साथ अहिंसक बना रहूँगा, और शत्रुता के भाव अपने हृदय से निकालकर बाहर फेंक दूंगा। मैं प्राणिमात्र को अत्यन्त प्रेम से देखूंगा"।

"मैं सदा सत्य बोलूंगा और सत्य को सदा अच्छे और मधुर शब्दों में प्रगट करूंगा। सत्य बोलने से जो विपत्ति मुझमें आवेगी उनको प्रसन्नता से सहन करूंगा"।

"मैं अपने मन वच कर्म से बुद्धियुक्त कार्य्य करूंगा। मैं स्वार्थ को अपने जीवन से बाहर फेंक दूंगा। मैं परोपकार का विचार कर संसार में कर्म करूंगा और दूसरे के अधिकार में कदापि हस्तक्षेप न करूंगा"।

"मैं शरीर से शुद्ध और पवित्र रहूँगा और प्रतिदिन विशेष अवस्था को छोड़कर स्नान किया करूंगा"।

Pandit Dharmanand Khandwi Village Bachhe Patti Kaliksyun

"मैं सन्तुष्ट रहूंगा और अपनी प्रत्येक अवस्था पर प्रसन्न रहूंगा और सदा भलाई को प्यार करूँगा।"

इन नियमों पर चलने की ईश्वर से प्रार्थना करो, लेकिन दृढ़ संकल्प करके नियमों को बना लो तभी प्रार्थना करो। अपने आपको सदा संयम में रखने की शक्ति रखो कि कोई विषय तुमको असंयमी न बना देवे।

इन नियमों की दृढ़ धारणा ही तुम्हारे जीवन को बहुत हल्का और सुखी बनायेगा, और तुम इस योग्य हो सकोगे कि भविष्य में आत्मिक उन्नति कर सको, और प्रत्येक मनवाञ्छित वस्तु को प्राप्त कर सको।

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः

इति।

Pandit Dharmanand Khandwi Village Bachheli Patti Kaliksyun.